विश्व शान्ति और अहिंसा

अणुव्रत-अनुशास्ता तुलसी
आचार्य महाप्रज्ञ

JVB

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

विश्व शान्ति और अहिंसा

अणुव्रत-अनुशास्ता तुलसी
आचार्य महाप्रज्ञ

जैन विश्व भारती
लाडनूं—341 306
राजस्थान

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सम्पादक :
मुनि धर्मेश

प्रकाशक :
जैन विश्व भारती
लाडनूं (राज.)

© जैन विश्व भारती, लाडनूं

जीवन के 82 वर्ष 247 वें दिन (16 फरवरी सन् 2003) में प्रवेश कर आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा इतिहास दुलर्भ पृष्ठ सृजन के अवसर पर दीर्घ आयुष्य की मंगलकामनाओं सहित
बुद्धमल सुरेन्द्र कुमार दुग्गड़, रतनगढ़-कोलकाता

संस्करण : 2003

Price Rs. : 10.00

मुद्रक : एस.एम प्रिन्टर्स, उल्धनपुर, दिल्ली–32

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

पुरोवाक

विचार, आचार और संस्कार ये तीन जीवन-निर्माण के मूल तत्त्व हैं। अनेकान्त से सम्पुटित सापेक्ष विचार समस्या को सुलझाता है, कहीं भी उलझन पैदा नहीं करता। अहिंसा और अपरिग्रह से अभिषिक्त आचार हिंसा और परिग्रह से अभिशप्त युग में संजीवनी का काम करता है। सम्यग् दर्शन, सम्यग् ज्ञान और सम्यक् चारित्र के संस्कार का पल्लवन हो, यह वर्तमान युग की अपेक्षा है। दिल्ली-यात्रा और वहां का दीर्घकालीन प्रवास निमित्त बना; कल्पना हुई कि सम्यग् विचार, आचार और संस्कार की बात जनता तक पहुंचे और वह उससे लाभान्वित हो। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए लघु पुस्तिकाओं की एक शृंखला की योजना बनाई गई।

आज का आदमी बहुत व्यस्त है। समय की अल्पता नहीं है फिर भी व्यस्तता की धारणा बनी हुई है, इसलिए वह बहुत बड़ा ग्रन्थ पढ़ने से कतराता है।

इस लघु पुस्तिका में जितना दिया जा सकता है वह इसमें पर्याप्त है। जैन शासन को समझने के लिए अहिंसा को समझना जरूरी है। अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान और जीवन-विज्ञान उसके विकास-सोपान हैं। उन पर आरोहरण कर पाठक स्वयं धन्यता का अनुभव करेंगे।

अणुव्रत अनुशास्ता तुलसी
आचार्य महाप्रज्ञ

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रस्तुति

अहिंसा और शान्ति कोरा दर्शन ही नहीं है, वह एक आचरण है। वह एक शाश्वत धर्म है, वह मात्र संकटकालीन स्थिति से उबरने का उपाय नहीं है। अहिंसा में असीम शक्ति है। उस शक्ति का जागरण तभी संभव हो सकता है, जब उसका बोध हो, शोध हो, प्रशिक्षण हो और प्रयोग हो। इस दिशा में हमारी यात्रा भीतर से शुरु हो। आज अहिंसा विवशता या बाध्यता की स्थिति में मान्य हो रही है इसलिए उसके बारे में अनुसंधान, प्रशिक्षण और प्रयोग कहां हो रहे हैं ?

विभिन्न राष्ट्रों की सरकारें युद्ध के लिए प्रशिक्षण और शोध की व्यवस्था करती हैं वैसे अहिंसा, अहिंसक समाज रचना और विश्व शान्ति के लिए प्रशिक्षण और शोध की व्यवस्था नहीं करती। क्या इस एकपक्षीय व्यवस्था से हिंसा को प्रोत्साहन और अहिंसा के मूल पर कुठाराघात नहीं हो रहा है। हमारा सामूहिक संकल्प हो कि सरकारें युद्ध के प्रशिक्षण की भांति अहिंसा के प्रशिक्षण का दायित्व भी अपने ऊपर लें। संयुक्त राष्ट्र संघ जो विश्व शान्ति की व्यवस्था के प्रति उत्तरदायी है उसका भी सहज दायित्व बनता है कि वह अहिंसा के प्रशिक्षण की व्यापक व्यवस्था का संचालन करे।

आज हिंसा का प्रशिक्षण अर्जित आदत का निर्माण कर रहा है। यह वर्तमान युग की सबसे खतरनाक स्थिति है। अणुव्रत आंदोलन इस दिशा में गतिशील है कि व्यक्ति में हिंसा एक आदत न बने। पूरे समाज को बदलने के लिए बड़े पैमाने पर अहिंसा प्रशिक्षण की आवश्यकता है। अहिंसा का प्रशिक्षण शिक्षा का अनिवार्य अंग हो तभी व्यांपक प्रशिक्षण की कल्पना की जा सकती है।

उपरोक्त विचारों के साथ गणाधिपति श्री तुलसी ने विश्व-शान्ति के लिए त्रिसूत्री कार्यक्रम की अपेक्षा को प्रस्तुत किया—

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

१. अहिंसा में आस्था रखने वाले लोगों का कोई शक्तिशाली मंच हो।

२. अहिंसा के क्षेत्र में काम करने वाले लोग अहिंसा की दृष्टि से प्रशिक्षित हों।

३. समर्थ शान्ति सेना के निर्माण की संभावना पर चिन्तन हो।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ के अनुसार अहिंसा के विकास के लिए आवश्यक है शिक्षा में बौद्धिक व्यक्तित्व के विकास के साथ-साथ भावनात्मक व्यक्तित्व के विकास की बात भी जुड़े।

वर्तमान विश्व में आर्थिक और भौतिक विकास की एकांगी अवधारणा ने हिंसा के आचरण को बढ़ावा दिया है। इन दशकों में अहिंसा के प्रति जो आकर्षण बढ़ा है, वह हिंसा से उत्पन्न समस्या के कारण बढ़ा है। हत्या, आतंक, संहारक शस्त्रों का निर्माण, हिंसक संघर्ष और युद्ध, ये हिंसक समस्याएं समाज की शान्ति को भंग कर रही हैं। सबको लग रहा है : वर्तमान की अशान्ति को मिटाने का सबसे सुन्दर समाधान अहिंसा है।

अहिंसा प्रशिक्षण की आधारभूमि है, व्यक्ति। और प्रयोग भूमि है, समाज। अतः अहिंसा प्रशिक्षण की पद्धति का मौलिक आधार है अहिंसानिष्ठ व्यक्तित्व का निर्माण। उसकी प्रयोग भूमियां चार हैं—

१. पारिवारिक जीवन

२. सामाजिक जीवन

३. राष्ट्रीय जीवन

४. अन्तर्राष्ट्रीय जीवन।

अहिंसा प्रशिक्षण के आधारभूत तत्व हैं—हृदय परिवर्तन, दृष्टिकोण परिवर्तन, जीवन शैली परिवर्तन एवं व्यवस्था परिवर्तन।

व्यक्ति का निर्माण समाज सापेक्ष और समाज का निर्माण व्यक्ति सापेक्ष होता है। इन दोनों सच्चाइयों को ध्यान में रखकर ही अहिंसा प्रशिक्षण की बात को आगे बढ़ाया जा सकता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

उपरोक्त विचार "शान्ति और अहिंसक-उपक्रम" पर आयोजित दो अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में प्रदत्त उद्बोधन एवं विशेष वक्तव्यों का सार संक्षेप है। इन उद्बोधन एवं वक्तव्यों में से कुछ का समावेश इस पुस्तिका में किया गया है।

प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन जैन विश्व भारती, लाडनूं के प्रांगण में ५ से ७ दिसम्बर १९८८ को सम्पन्न हुआ एवं द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन अणुव्रत विश्व भारती, राजसमन्द के प्रांगण में १७ से २१ फ़रवरी १९९१ को सम्पन्न हुआ। प्रत्येक सम्मेलन में रूस, अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, जापान, कनाडा, ब्रिटेन, स्वीडन, बांग्लादेश, हॉलैण्ड, थाइलैण्ड आदि अनेक देशों के सौ से अधिक प्रतिनिधियों ने भाग लिया। ये सारे प्रतिनिधि अहिंसा और शान्ति के क्षेत्र में कार्य करने वाली संस्थाओं से सम्बन्धित थे।

यह कार्य गुरुदेव श्री तुलसी की दृष्टि, आचार्य श्री महाप्रज्ञ एवं महाश्रमण श्री मुदित कुमार जी की प्रेरणा, मुनि श्री दुलहराज जी के प्रोत्साहन का परिणाम है। सामग्री को उपलब्ध कराने में मुनि श्री महेन्द्र कुमार जी की महती कृपा रही है। इसको संवारने में अनेकान्त शोध पीठ, जैन विश्व भारती, लाडनूं के विद्वान श्री गिरिजा प्रसाद महापात्र का सक्रिय सहयोग रहा है।

आशा है कि यह पुस्तिका "विश्व शान्ति और अहिंसा" इस दिशा में एक नया आलोक प्रदान करेगी।

— मुनि धर्मेश

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अनुक्रमणिका

१.	अहिंसा के आधारभूत तत्त्व	१
२.	आध्यात्मिक-वैज्ञानिक व्यक्तित्व का निर्माण	४
३.	विश्व शान्ति और अहिंसा	६
४.	शान्ति और अहिंसा-उपक्रम	१६
५.	अहिंसा प्रशिक्षण और जीवन मूल्य	२३
६.	अहिंसा का प्रशिक्षण	२६
७.	ऐसे मिला मुझे अहिंसा का प्रशिक्षण	३१
८.	अहिंसा के प्रशिक्षण की आधारभूमि	३८
९.	अनेकान्त और अहिंसा	४६
	परिशिष्ट	५३

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अहिंसा के आधारभूत तत्त्व

— **गणाधिपति तुलसी**

अशान्ति और हिंसा तथा शान्ति और अहिंसा—ये दो युगल हैं। जैसे अशान्ति और हिंसा को कभी अलग-अलग नहीं देखा जा सकता, वैसे ही शांति और अहिंसा को विभक्त नहीं किया जा सकता। अहिंसा को मैं व्यापक संदर्भ में देखता हूं।

अणुव्रत उस व्यापकता की एक व्यावहारिक संहिता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

भेद हमारी उपयोगिता है। बांटना, विभक्त करना सुविधा है। इस उपयोगिता और सुविधा को हमने वास्तविक मान लिया और उसके आधार पर मानव-जाति को टुकड़ों में बांट दिया। जाति और रंगभेद के आधार पर मनुष्य-मनुष्य में एक घृणा की दीवार खड़ी हो गई। हीनता और उच्चता का एक अभेद्य किला बन गया। यह कहना अतिप्रसंग नहीं होगा कि इस जाति और रंगभेद के कारण हिंसा को निरंतर बढ़ावा मिल रहा है। मनुष्य में हीनता और अहं की ग्रन्थि सहज ही होती है। यह जातिवाद और रंगवाद इन दोनों ग्रंथियों को खुलकर खेलने का मौका दे रहा है। मनुष्य-जाति का एक बहुत बड़ा भाग हीनता की ग्रंथि से ग्रस्त है तो दूसरा भाग अहं की ग्रंथि से रुग्ण है। क्या जातिवाद को समाप्त नहीं किया जा सकता? जाति काल्पनिक है। उसे समाप्त करने की बात सोच भी लें पर रंगभेद एक यथार्थ है। वह कोरी कल्पना नहीं है। उसकी समाप्ति होने पर भी हिंसा की समस्या सुलझेगी नहीं। इसलिए मैं सोचता हूं—अहिंसा की दिशा में हमारी यात्रा भीतर से शुरु हो। जातिभेद और रंगभेद के होने पर भी हिंसा न भड़के, घृणा को अपना पंजा फैलाने का अवसर न मिले, ऐसा कुछ सोचना है और वह भीतरी यात्रा से ही संभव है। मैं अहिंसा की अन्तर्यात्रा में विश्वास करता हूं। हम मनुष्य-मनुष्य के बीच प्रेम का इतना सशक्त वातावरण बनाएं कि उसमें

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

घृणा को जन्म लेने का मौका ही न मिले। इतिहास साक्षी है कि समाज की धरती पर जितने घृणा के बीज बोए गए, उतने प्रेम के बीज नहीं बोए गए। यदि आज हम इस ऐतिहासिक यथार्थ को बदलने की दिशा में चलें तो हमारा नई दिशा में प्रस्थान होगा।

वैचारिक स्वतंत्रता को रोकना किसी भी दृष्टि से वांछनीय नहीं है। उस वैचारिक स्वतंत्रता के आधार पर ही अनेक धर्म-सम्प्रदाय विकसित हुए हैं। उनमें प्रायः सभी में प्रेम, मैत्री और अहिंसा की बात न्यूनाधिक मात्रा में कही गई है; किन्तु धर्म का आचरण बहुत कम हुआ है। उसका अनुगमन या अनुसरण अधिक हुआ है। हमारा ध्यान अनुयायियों की संख्या पर केन्द्रित है। आचरण पर केन्द्रित नहीं है। अनुयायी और धार्मिक—ये दोनों भिन्न हैं। अनुयायी करोड़ों हो सकते हैं। उनमें धार्मिक कितने हैं, यह विमर्शणीय बिन्दु है। अनुयायियों की संख्या अधिक और धार्मिकों की संख्या कम होने के कारण ही साम्प्रदायिक हिंसा को उत्तेजना मिलती रही है। क्या अहिंसा को विश्व-धर्म घोषित किया जा सकता है? जहां हिंसा है, वहां धर्म नहीं है। धर्म वहीं है, जहां अहिंसा है। क्या यह अवधारणा साम्प्रदायिक कट्टरता से होने वाली हिंसा को रोकने में सफल हो सकती है? यह चिन्तन का एक बिंदु है। इस बिन्दु पर हमें चर्चा करनी है और किसी ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचने का प्रयत्न करना है, जिससे धर्म या सम्प्रदाय के नाम पर हिंसा को फैलाने का अवसर न मिले।

राज्य-सत्ता की अपनी उपयोगिता है। उसे समाप्त करने की बात सोची नहीं जा सकती। यदि सोची जाय तो वह कितनी व्यावहारिक हो सकती है, यह प्रश्नचिह्न ही है। किन्तु राज्यसत्ता के साथ हिंसा की बढ़ोत्तरी हो रही है, वह आज की जटिल समस्या है। शस्त्रीकरण को राज्यसत्ता का अनिवार्य सुरक्षा कवच माना गया है और माना जा रहा है। आज जिस गति से संहारक-शस्त्रों का विकास हो रहा है, उससे पूरी मानव जाति संत्रस्त है। निःशस्त्रीकरण की चर्चा चल रही है। इस कॉन्फ्रेन्स के साथ भी निःशस्त्रीकरण की बात जुड़ी हुई है। यह कॉन्फ्रेंस जन-प्रतिनिधियों की है, राज्यसत्ता के प्रतिनिधियों की नहीं है। शस्त्रीकरण की शक्ति राज्यसत्ता के हाथ में है। क्या जन-प्रतिनिधियों की बात पर राज्य सरकारें ध्यान देंगी? शक्ति-संतुलन को विश्व शान्ति का आधार माना जा रहा है। उस स्थिति में राज्य सरकारें जन-प्रतिनिधियों की बात पर कैसे ध्यान देंगी? यह बात सहज ही तर्कसंगत लगती है, पर इस तर्क के सामने हमें निराशा की सांस नहीं लेनी है। जन-शक्ति शस्त्रीकरण की शक्ति से भी अधिक बलवान है। अहिंसा में आस्था रखने वाले यदि अपनी बात जनता तक पहुंचा सकें,

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

उनकी आस्था और लगन अदम्य हो तो एक न एक दिन राज्य सरकारों को उनकी बात पर ध्यान देने के लिए बाध्य होना पड़ सकता है। सही बात यह है कि अहिंसा में विश्वास रखने वाले लोग विश्वमंच पर ऐसे वातावरण का निर्माण करने में सफल नहीं हुए हैं जिससे वे राज्यसत्ता के शासक-वर्ग को प्रभावित कर सकें। हमें अहिंसा के मूलभूत आधार तत्त्वों को नहीं भुलाना चाहिए :

१. हम सब मनुष्य हैं।

२. मनुष्य में विवेक-चेतना जागृत होती है।

३. लोभ, स्वार्थ आदि कारणों से उस विवेक-चेतना पर मूर्च्छा का आवरण आता है।

४. उस मूर्च्छा के आवरण को हटाया जा सकता है।

५. जातीय, साम्प्रदायिक और राष्ट्रीय भेद-रेखाओं के नीचे जो अभेद है, मौलिक एकता है, इसका अनुभव किया जा सकता है, कराया जा सकता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

६. मनुष्य में अच्छाई के बीज हैं, उन्हें अंकुरित किया जा सकता है।

इन सबके लिए एक तीव्र प्रयत्न की जरूरत है। हमारे भीतर उस तीव्र प्रयत्न की अभीप्सा को जगा सकें तो अहिंसा का एक शक्तिशाली अस्त्र के रूप में प्रयोग किया जा सकेगा। यह अस्त्र संहारक नहीं होगा, मानव जाति के लिए बहुत कल्याणकारी होगा। इस कल्याणकारी उपक्रम की सफलता के लिए मैं आह्वान करता हूं कि अहिंसा की दिशा में सोचने वाले सब लोग एक मंच पर आएं और एक स्वर से बोलें। एक दिशा में उन सबके चरण आगे बढ़ें। इस मंगल-कामना के साथ अग्रिम सफलता के लिए मैं फिर शुभकामना करता हूं।

"शान्ति एवं अहिंसक-उपक्रम" लाडनूं में आयोजित प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन, ५ से ७ दिसम्बर १९८८, में प्रदत्त गणाधिपति श्री तुलसी का उद्घाटन सत्र में उद्बोधन।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

आध्यात्मिक-वैज्ञानिक व्यक्तित्व का निर्माण

— आचार्य महाप्रज्ञ

'सच्चं भयवं'—सत्य ही भगवान है। महात्मा गांधी ने भी इसी विचार को बताया था और आचार्य तुलसी भी यही कहते हैं। आज हम सब इसी सत्य को पाने के लिये यहां एकत्रित हुए हैं।

भारतीय दर्शन के अनुसार देशातीत होना ही अहिंसा है, यही शान्ति है। इसके लिये सीमा और संतुलन शब्दों पर जोर देना आवश्यक है। जब तक इच्छा के परिमाण पर विचार नहीं होगा अहिंसा की बात करना ही व्यर्थ है। भौतिक संग्रह और आर्थिक विषमता आज की मुख्य समस्या है। व्यक्तिगत स्वामित्व असीम हो रहा है। व्यक्तिगत स्वामित्व का न होना व्यावहारिक नहीं है, किन्तु व्यक्तिगत स्वामित्व का असीम होना अन्याय है। अहिंसा की प्रतिष्ठा के लिए अहिंसा से पहले परिग्रह के सीमांकन पर ध्यान देना आवश्यक है।

अहिंसा की प्रस्थापना में एक महत्वपूर्ण आयाम है—सुविधावादी दृष्टिकोण में बदलाव। हम प्रदूषण से चिन्तित हैं, त्रस्त हैं। सुविधावादी दृष्टिकोण प्रदूषण पैदा कर रहा है। उस पर हमारा ध्यान नहीं है। मैं जानता हूं, समाज सुविधा को छोड़ नहीं सकता; किन्तु वह असीम न हो, यह विवेक आवश्यक है। यदि सुविधाओं का विस्तार निरन्तर जारी रहा तो अहिंसा का स्वप्न कभी यथार्थ में परिणत नहीं होगा। हमें सुविधावादी दृष्टिकोण को समाप्त करना है, विचारों में मोड़ लाना है।

हम एक तरफ तो अहिंसक समाज रचना की बात कर रहे हैं, दूसरी ओर हमारी शिक्षा केवल बौद्धिक व्यक्ति पैदा कर रही है। भावना की शिक्षा के बिना बौद्धिक शिक्षा व्यर्थ है। शिक्षा में अहिंसा के विकास के लिये कोई स्थान ही नहीं है। जब तक

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

हमारी शिक्षा में बौद्धिक व्यक्तित्व के साथ-साथ भावनात्मक व्यक्तित्व के विकास की बात नहीं जुड़ेगी, अहिंसा की बात व्यर्थ हो जायेगी।

आध्यात्मिक-वैज्ञानिक व्यक्तित्व के निर्माण के लिये कुछ बातों पर ध्यान केन्द्रित होना जरूरी है :

- प्रवृत्ति और निवृत्ति में संतुलन,
- अनुकंपी परानुकंपी नाड़ी तन्त्र में संतुलन,
- मस्तिष्क के दाएं और बाएं पटल का संतुलन।

प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के उद्घाटन सत्र में प्रदत्त विशेष वक्तव्य।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

विश्व शांति और अहिंसा

— गणाधिपति तुलसी

समाज में अनेक लोग होते हैं। वे परस्पर एक सूत्र से बंधे हुए होते हैं। वह सूत्र है—**परस्परता**। अनेक होना समूह है। केवल समूह समाज नहीं बनता। समाज परस्परता के सूत्र से बंधकर ही बनता है। एक धागे में पिरोए हुए मनके माला का रूप लेते हैं। उस धागे का मूल्यांकन करना सबसे अधिक आवश्यक है।

भगवान् महावीर की पच्चीसवीं निर्वाण शताब्दी मनाई गई। उस अवसर पर एक जैन प्रतीक प्रस्तुत किया गया। उसकी आधार-भित्ति में एक सूत्र अंकित है—"*परस्परोपग्रहो जीवानाम्*।" यह जैन परम्परा के प्रथम संस्कृत ग्रंथ का एक महत्त्वपूर्ण सूत्र है। इसका अर्थ है—जीवों में परस्पर उपग्रह-अनुग्रह अथवा उपकार का संबंध है। उद्योगपति अपने मजदूर को वेतन देता है और मजदूर उद्योगपति के हित का साधन करता है तथा अहित का निवारण करता है—यह है परस्पर-उपग्रह। आचार्य अपने शिष्य को ज्ञान देता और उससे अनुष्ठान कराता है। शिष्य आचार्य के अनुकूल प्रवृत्ति करता है, उनके निर्देश को शिरोधार्य करता है। यह है परस्पर-उपग्रह। हमारे जीवन का सूत्र संघर्ष नहीं है। संघर्ष एक विवशता है। वह स्वतंत्र प्रवृत्ति नहीं है। परस्पर-उपग्रह यह उसकी स्वतंत्र प्रवृत्ति है। संघर्ष जीवन है—यह सूत्र मनुष्य को हिंसा की ओर उन्मुख करता है। परस्पर-उपग्रह की धारणा उसे अहिंसा की ओर ले जाती है।

हम सामाजिक जीवन जी रहे हैं। समाज का घटक है, व्यक्ति। जैसा व्यक्ति होता है, वैसा समाज होता है। जैसा समाज होता है, वैसा व्यक्ति होता है। इन दोनों विकल्पों में सच्चाई हैं, किन्तु सापेक्ष। वर्तमान में समाज की अवधारणा आर्थिक

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

व्यवस्था और परिस्थिति से जुड़ी हुई है। आर्थिक व्यवस्था और परिस्थिति अच्छी है, तो व्यक्ति अच्छा होगा, यह मान लिया गया है। इसमें निमित्त को सब कुछ मान लिया गया है। व्यक्ति की अपनी योग्यता की उपेक्षा की गई है। अच्छाई और बुराई का उपादान या मूल कारण है—व्यक्ति की अपनी योग्यता और उसका निमित्त कारण है—आर्थिक-व्यवस्था और सामाजिक परिस्थिति। व्यक्ति के संदर्भ में इस सिद्धांत की आलोचना करें तो यह तर्क की कसौटी पर खरा नहीं उतरता।

जैसा व्यक्ति, वैसा समाज—इस सिद्धांत में मूल कारण को सब कुछ मान लिया गया और निमित्त कारण की उपेक्षा की गई इसलिए यह भी परिपूर्ण नहीं है। मूल में शक्ति होती है, पर निमित्त का योग मिले बिना उसकी अभिव्यक्ति नहीं होती। समग्रता की दृष्टि से विचार करें तो यह सूत्र बनेगा—व्यक्ति, आर्थिक व्यवस्था और सामाजिक व्यवस्था। इन तीनों में सापेक्ष और संतुलित परिवर्तन हो तभी स्वस्थ समाज या अहिंसक समाज की परिकल्पना की जा सकती है।

सोवियत रूस, चीन आदि देशों में आर्थिक व्यवस्था और समाज व्यवस्था के परिवर्तन पर बहुत भार दिया गया । फलस्वरूप वहां व्यवस्थाएं बदल गईं, फिर भी व्यक्ति नहीं बदला। व्यक्ति आज भी वैसा ही है। नियंत्रण की स्थिति में भी आर्थिव और सामाजिक अपराध हो रहे हैं। यदि नियंत्रण को ढीला कर दिया जाए तो अपराध वृद्धि हो सकती हैं। कोरा व्यवस्था-परिवर्तन पर्याप्त नहीं हैं। इसे समाजवादी या साम्यवादी जीवन-प्रणाली के संदर्भ में देखा जा सकता है।

ब्रिटेन, अमरीका, हिन्दुस्तान आदि देशों में लोकतंत्रीय प्रणाली चल रही है। उसमें व्यक्ति को वाणी, लेखन और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्राप्त है। किन्तु व्यक्ति की उपेक्षा नहीं की गई है, हर व्यक्ति को अपनी योग्यता के विकास का समान अवसर दिया गया है पर आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था पर पूरा नियंत्रण नहीं है। इसलिए लोकतंत्रीय प्रणाली में एक व्यक्ति अरबपति बन सकता है और दूसरा रोटी के लिए तरसता रह जाता है। जीवन-निर्वाह के साधनों की उपलब्धि की अनिवार्य व्यवस्था नहीं है। व्यक्तिगत स्वामित्व की कोई सीमा नहीं है।

हमारे विश्व की सर्वाधिक महत्वपूर्ण दोनों (लोकतंत्रीय और साम्यवादी) प्रणालियों में हिंसा के बीज निहित हैं। अब विश्व शांति के लिए एक तीसरी प्रणाली के विकास की आवश्यकता है। जैन दर्शन का एक महत्वपूर्ण सिद्धांत

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

है—**अनेकांतवाद**। उसके अनुसार तीसरी जाति निर्दोष होती है। दर्शन के क्षेत्र में नित्यवाद की अवधारणा मान्य है। अनित्यवाद भी सम्मत है। अनेकांत के अनुसार ये दोनों निर्दोष नहीं है। इन दोनों का समन्वय कर नित्यानित्यवाद बनता है। वह निर्दोष है। ठीक इसी प्रकार समाजवादी अर्थव्यवस्था का सूत्र—व्यक्तिगत स्वामित्व की सीमा और लोकतंत्र की व्यक्तिगत स्वतंत्रता—इन दोनों का योग कर समाज-व्यक्तिवादी प्रणाली का विकास किया जाए तो विश्व शांति की समस्या को स्थाई समाधान दिया जा सकता है। सुप्रसिद्ध इतिहासकार "टॉयनबी" ने रोटी और आस्था के प्रश्न को विश्व के सम्मुख रखा था। रोटी को छोड़कर आस्था और आस्था को छोड़कर रोटी पाने की प्रवृत्ति निर्दोष नहीं हो सकती। जिस प्रणाली में रोटी और आस्था दोनों का समीचीन योग हो, वही प्रणाली विश्व शांति के लिए प्रशस्त हो सकती है।

सह-अस्तित्व

हम एक पृथ्वी पर जी रहे हैं, एक ही सौरमडंल के प्रभाव क्षेत्र में श्वास ले रहे हैं। अन्तर्नक्षत्रीय विकिरण हम सब को प्रभावित कर रहा है। हम सबको अनुकूल वातावरण और पर्यावरण की अपेक्षा रहती है। इस प्राकृतिक स्थिति ने सह-अस्तित्व की धारणा को जन्म दिया है। हमें एक साथ जीना है, एक साथ रहना है। यह हमारी प्रकृति है। इस प्रकृति में कुछ अवरोध भी हैं। प्राकृतिक और भौगोलिक अवरोध कम हैं, कृत्रिम या काल्पनिक अवरोध अधिक हैं। हमने बहुत सारी मान्यताएं और धारणाएं बना ली हैं। उनकी चादर को ओढ़कर हम घूम रहे हैं। इसलिए वास्तविकता के साथ हमारा सीधा संपर्क नहीं होता। चादर की ओढ़नी में ढकी हुई आंखें जो देखती हैं वही हमारे लिए सच्चाई बनी हुई है। इस चादर से छनकर जो श्वास आ रहा है, वही हमारे लिए शुद्ध प्राणवायु है। खुली आंख से देखने और खुले नाक से सांस लेने का अवसर कम मिलता है, या नहीं मिलता। इसीलिए मनुष्य-मनुष्य के बीच बहुत बड़ी दीवारें खड़ी हैं। वे एक-दूसरे को देख ही नहीं पा रही हैं। साक्षात्कार के बिना एक-दूसरे को समझने का अवसर ही कहां आता है?

जाति-भेद, रंग-भेद और संप्रदाय-भेद—यह भेद की त्रिपदी हैं। इस त्रिपदी ने मनुष्य को बांट दिया और इतना बांट दिया कि उसके सामने शत्रुता का दर्शन जितना स्पष्ट है, मैत्री का दर्शन उतना स्पष्ट नहीं है। इस शत्रुता के दर्शन ने प्राकृतिक

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सह-अस्तित्व को विकृति जैसा बना दिया। आज विश्व-मैत्री या विश्व शांति के सिद्धान्त को समझाने के लिए बहुत प्रयत्न की जरूरत पड़ती है। शत्रुता और अशांति को समझाने की कोई जरूरत नहीं है।

एक व्यक्ति हिन्दुस्तान का नागरिक है, दूसरा पाकिस्तान का। यह राष्ट्रीयता का भेद उन्हें बांटे हुए है। हिन्दुस्तान के व्यक्ति में हिन्दुस्तान की भूमि के प्रति जितना लगाव होता है, उतना पाकिस्तानी मनुष्य के प्रति लगाव नहीं है। वास्तव में मनुष्य मनुष्य के अधिक निकट होता है। व्यवहार इससे भिन्न है। व्यवहार की सीमा में पदार्थ के प्रति जितना लगाव है उतना मनुष्य के प्रति नहीं है। जाति, रंग और संप्रदाय की धारणा के प्रति जितना लगाव है उतना मनुष्य के प्रति नहीं है। वास्तविक सत्य और व्यवहार की दूरी सचमुच एक जटिल समस्या है।

दर्शन शास्त्र में तीन प्रकार के विरोध निर्दिष्ट हैं—प्रतिबध्य-प्रतिबंधक, बध्य-बंधक और सहानवस्थान। बल्ब प्रकाश की रश्मियों को बिखेर रहा था, इतने में किसी ने स्विच ऑफ कर दिया। प्रकाश अंधकार में बदल गया। यह प्रतिबध्य-प्रतिबंधक जाति का विरोध है। सांप और नेवले में बध्य-बंधक जाति का विरोध है। पानी और आग एक साथ नहीं रह सकते इसिलिए उनमें सहानवस्थान जाति का विरोध है।

भेद और विरोध की स्थिति में हम सह-अस्तित्व की कल्पना नहीं कर सकते। जैन-दर्शन ने इस समस्या का समाधान खोजा। उस समाधान की भित्ति पर अहिंसा की प्रतिष्ठा की गई। अनेकान्त में विरोध के परिहार का एक प्रशस्त दृष्टिकोण है। उसका एक सूत्र है—इस विश्व में सर्वथा विरोध और सर्वथा अविरोध जैसा कुछ भी नहीं है। सर्वथा भेद और सर्वथा अभेद— ये सत्य नहीं है। जहां विरोध अभिव्यक्त है, वहां अविरोध उसके नीचे छिपा हुआ है। इसी प्रकार भेद के नीचे अभेद और अभेद के नीचे भेद तिरोहित रहता है। हम केवल भेद और विरोध को देखते हैं तो हिंसा को बल मिलता है। केवल अभेद और अविरोध को देखते हैं, तो हमारी उपयोगिता की धारणा टूटती है। व्यवहार ठीक से नहीं चलता, इसलिए भेद और अभेद तथा विरोध और अविरोध में सापेक्षता का अनुभव करना, उनमें सामंजस्य स्थापित करना, हिंसा की समस्या का समाधान है। इसी आधार पर सह-अस्तित्व के सिद्धांत की क्रियान्विति की जा सकती है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

पदार्थवादी दृष्टिकोण

मनुष्य में अहंकार की वृत्ति है इसलिए वह बड़ा बनना चाहता है। अथवा सबसे बड़ा बनना चाहता है। इस महत्वकांक्षा से पदार्थवाद की आधारशिला निर्मित हुई है। मनुष्य में संवेदन है। वह प्रिय संवेदन चाहता है। इस सुखवादी और सुविधावादी दृष्टिकोण ने पदार्थवाद का प्रासाद खड़ा किया है। पदार्थवाद के प्रासाद की ऊंचाई को छूने वाला कोई भी व्यक्ति नीचे खड़े लोगों की ओर देखना ही नहीं चाहता। आज व्यक्ति-शक्ति अपने अहंकार और सुख-सुविधा की दिशा में लगी हुई है। फिर हम विश्व शांति और अहिंसा की बात कैसे सोचें और कैसे उसकी क्रियान्विति करें? शांति और अहिंसा कोरा दर्शन ही नहीं है, वह एक आचरण है। सिद्धांत की अपेक्षा आचरण का पक्ष अधिक कठिन है। पूरे समाज का आचरण महत्त्वाकांक्षा और सुख-सुविधावाद से संप्रेरित है। इसका परिणाम अशांति और हिंसा है। उसे बदलने के लिए हम कैसे सफल हो सकते हैं? यह प्रश्न एक बार नहीं, अनेक बार मन को आंदोलित कर देता है। हम अहिंसा की बात सोचते हैं पर समझ नहीं पाते कि हिंसा के चक्र को कहां से तोड़े? क्या महत्त्वाकांक्षा को त्यागना इतना सरल है कि चर्चा और चिंतन-मात्र से आदमी उसे छोड़ देगा? क्या सुख-सुविधा को त्यागना इतना सहज है कि आदमी अहिंसा के विचार को पढ़कर सुख-सुविधा से विमुख हो जाएगा? महत्त्वाकांक्षी और सुख-सुविधा की विमुखता नहीं होगी तो शस्त्रीकरण की होड़, युद्ध, अशांति और हिंसा का चक्र भी नहीं टूटेगा। अमेरिका और रूस शस्त्र-परिशीलन के लिए तैयार होंगे तो कोई तीसरा-चौथा राष्ट्र परमाणु शस्त्रों को बढ़ाने की बात सोचेगा। फिर शक्ति-संतुलन का प्रश्न खड़ा हो जाएगा। शक्ति-संतुलन को बनाए रखने के लिए विकसित राष्ट्रों में फिर शस्त्र-निर्माण की होड़ शुरु हो जाएगी। इस प्रकार जागतिक अशांति और विश्व युद्ध का खतरा हमेशा बना रहेगा।

निःशस्त्रीकरण युद्ध की समस्या का एक समाधान है किन्तु युद्ध की पृष्ठभूमि पर विचार किए बिना यह समाधान पर्याप्त नहीं है। विस्तारवादी मनोवृत्ति, अपनी राजनीतिक प्रणाली और जीवन-प्रणाली को व्यापक बनाने का प्रयत्न, अपने संप्रदाय में पूरे विश्व को दीक्षित करने का प्रयत्न—यह सब युद्ध की पृष्ठभूमि है। हम लोग यदि विश्व शांति और युद्ध-वर्जना की बात सोचें तो हमें सबसे पहले पृष्ठभूमि की समस्याओं को सुलझाने की बात सोचनी चाहिए।

© Jain Vishva Bharati　　For Private & Personal Use Only　　https://books.jvbharati.org

अहिंसा : एक शाश्वत धर्म

अहिंसा शाश्वत धर्म है। पर हम उसे शाश्वत धर्म के रूप में स्वीकार नहीं कर रहे हैं। जब-जब मानव-समाज पर खतरे के बादल मंडराते हैं तब भयभीत दशा में अहिंसा की बात याद आती है और उसके विकास के लिए हमारा प्रयत्न शुरु होता है। इस प्रकार हमने अहिंसा को संकटकालीन स्थिति से उबरने का उपाय मान लिया है। इसीलिए अहिंसा का स्वतंत्र विकास नहीं हो रहा है। हिंसा निषेधात्मक प्रवृत्ति है। वह विधायक जैसी बनी हुई है। अहिंसा की प्रवृत्ति विधायक है पर वह निषेधात्मक जैसी बनी हुई है। हिंसा का निषेध अहिंसा है—इस शब्द-रचना से ही एक भ्रान्ति पैदा हो गई है। इस भ्रान्ति ने हिंसा को पहले नंबर में और अहिंसा को दूसरे नंबर में रखने की धारणा बना दी। इस धारणा से अभिभूत आदमी यह मानकर चल रहा है कि हिंसा जीवन के लिए अनिवार्य है, अहिंसा अनिवार्य नहीं है। जिस दिन अहिंसा की अनिवार्यता समझ में आती है, हिंसा का चक्रव्यूह अपने आप टूट जाता है।

अहिंसा की समस्या

हिंसा को मनुष्य ने मान्यता दे दी है। इस स्थापना की पुष्टि बहुत सरलता से की जा सकती है। आज संहारक अस्त्रों की खोज के लिए हजारों वैज्ञानिक समर्पित हैं। हजारों-हजारों सैनिक प्रतिदिन युद्ध का प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। अनगिनत सैनिक प्रतिदिन युद्ध के अभ्यास में संलग्न हैं। हिंसा के क्षेत्र में अनुसंधान, प्रशिक्षण और प्रयोग—ये तीनों चल रहे हैं। इससे सहज ही यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि हिंसा को जीवन में मान्यता प्राप्त है।

अहिंसा विवशता या बाध्यता की स्थिति में मान्य हो रही है। इसलिए उसके बारे में अनुसंधान, प्रशिक्षण और प्रयोग कहीं नहीं हो रहे हैं। जहां कहीं हो रहा है, उसका स्वर इतना मंद और क्षीण है कि हिंसा के नगाड़ों के बीच वह तूती की आवाज भी नहीं बन पा रहा है। अहिंसा की यह सबसे बड़ी समस्या है। हिंसा में मादकता है इसलिए वह संहारक होकर भी प्रिय बन रही है। अहिंसा एक वास्तविकता है फिर भी वह समाज के आकर्षण का विषय नहीं बन रही है। इस समस्या से निपटने के लिए अहिंसा में आस्थावान व्यक्तियों को कुछ नए ढंग से सोचने-करने की जरूरत है।

महामात्य चाणक्य नंदवंश के उन्मूलन में लगा हुआ था। वह छद्मवेश में

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

घूमता हुआ एक बुढ़िया के घर में पहुंचा। बुढ़िया ने उसका आतिथ्य किया और भोजन के लिए खिचड़ी परोसी। छद्मवेशी चाणक्य ने उसके बीच में हाथ डाला। खिचड़ी गर्म थी। हाथ जल गया। बुढ़िया बोली—तू भी चाणक्य जैसा मूर्ख लगता है। "कैसे मां"—छद्मवेशी चाणक्य ने पूछा। बुढ़िया बोली—चाणक्य अपनी छोटी-सी सेना को लेकर सीधा नंदवंश की राजधानी पर आक्रमण करता है। नंद साम्राज्य की विशाल सेना उसे परास्त कर देती है। यह मुर्खता ही तो है। यदि तू किनारे से खिचड़ी खाता तो धीरे-धीरे बीच की भी ठंडी हो जाती। तेरा हाथ नहीं जलता। चाणक्य ने एक बोध-पाठ पढ़ा, बुढ़िया से। पहले गांवों और कस्बों को जीता। अपनी शक्ति बढ़ा ली। फिर राजधानी पर आक्रमण किया। नंद साम्राज्य का पतन हो गया।

हिंसा का साम्राज्य बहुत बड़ा है। उसकी सेना बहुत विशाल है। हम सीधा हिंसा के गढ़ पर आक्रमण करें तो सफल नहीं हो सकते। पहले जनता के मानस को बदलने का प्रयत्न करें। अहिंसा के प्रति आकर्षण पैदा हो। अहिंसा हमारे जीवन की सफलता और शांति का अनिवार्य अंग है, यह बात बचपन से ही मस्तिष्क में बैठ जाए। इसके लिए हमें अहिंसा विषयक मस्तिष्कीय प्रशिक्षण की पद्धति तैयार करनी होगी। हिंसा के लिए जो रसायन उत्तरदायी हैं, उन्हें बदलने की विधि का विकास करना है। हम केवल वाचिक चर्चा और सिद्धांत की प्रस्तुति कर हिंसा के साम्राज्य से लोहा नहीं ले सकते। उसके लिए हमें हृदय-परिवर्तन या ब्रेन-वाशिंग की पद्धति का सहारा लेना होगा। **प्रेक्षाध्यान** के अभ्यास और प्रयोग के द्वारा उन रसायनों में बदलाव लाया जा सकता है, जो हिंसा के लिए उत्तरदायी हैं। यह रासायनिक परिवर्तन अहिंसा के विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम होगा।

अहिंसा और शिक्षा-पद्धति

वर्तमान शिक्षा-पद्धति में बौद्धिक विकास पर अत्यधिक भार दिया गया है। आज के महाविद्यालय और विश्वविद्यालय से अच्छे-अच्छे प्राध्यापक, वैज्ञानिक, विधिवेत्ता, प्रशासक, शिक्षाशास्त्री और व्यवसायी निकल रहे हैं। किन्तु उच्च कोटि का नैतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक व्यक्ति नहीं निकल रहा है। हमारा बायां मस्तिष्क बहुत सक्रिय हो गया है। मस्तिष्क का दायां पटल निष्क्रिय हो रहा है। इस असंतुलन ने पूरे व्यक्तित्व को असंतुलित बना दिया है। यह असंतुलित व्यक्तित्व हिंसा के लिए

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

जिम्मेवार है। अहिंसा के लिए संतुलित व्यक्तित्व का विकास बहुत जरूरी है। हमारी शिक्षा पद्धति में बौद्धिक और भावनात्मक विकास का संतुलन बने तब हिंसा की समस्या को सुलझाने में हमें सुविधा होगी। मस्तिष्क के बाएं पटल के साथ दाएं पटल को भी जागृत किया जाए तो अहिंसा के लिए एक उर्वरा भूमि बन जाती है। उसमें अहिंसा का बीज आसानी से बोया जा सकता है और उसके अंकुरण की आशा की जा सकती है।

अहिंसा और संकल्प शक्ति

कोई व्यक्ति हिंसा क्यों कर रहा है? अहिंसक के सामने यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिए हमें चेतना के सूक्ष्म-स्तर (अनकोंसियस माइण्ड) तक जाना जरूरी है। वहां एक अविरति, मनोविज्ञान की भाषा में अव्यक्त इच्छा काम कर रही है। वह हिंसा के लिए अभिप्रेरणा बनी हुई है। उस पर नियंत्रण संकल्प-शक्ति या व्रत-शक्ति के विकास द्वारा ही किया जा सकता है। इसके लिए अणुव्रत का अभियान चलाया जा रहा है। मनुष्य के अचेतन मन में अहंकार है। इसलिए वह अपने आपको सर्वोच्च और दूसरों को हीन देखने में रस लेता है। रंग-भेद और जाति-भेद की समस्या उसी अहंकार से जुड़ी हुई है। आग्रह का भी अहंकार से संबंध है। यही सांप्रदायिक समस्या का मूल बीज है। अणुव्रत आन्दोलन का एक व्रत है—

"मैं मानवीय एकता में विश्वास करूंगा—जाति, रंग आदि के आधार पर किसी को ऊंच-नीच नहीं मानूंगा, अस्पृश्यता नहीं मानूंगा।"

अहिंसा के विकास के लिए हमारी दृष्टि यह है कि हम केवल हिंसा की वर्तमान घटनाओं के प्रति ही सचेत न रहें किन्तु उन घटनाओं को जन्म देने वाली मूलवृत्ति के प्रति भी सचेत बनें। हिंसा की वर्तमान समस्याओं के लिए निःशस्त्रीकरण का और युद्धवर्जन की दिशा में काम करना जरूरी है। किन्तु यह बहुत अपर्याप्त है। यह ठीक वैसा ही है कि आग लगी और बुझा दी जाए। फिर आग लगी और बुझा दी जाए। आग क्यों लगती है—इसकी खोज न की जाए। आग को बुझाना और आग क्यों लगती है, इस कारण की खोजना समग्रता के लिए ये दोनों बातें जरूरी हैं। हिंसा की वर्तमान समस्या का समाधान करना और उसके मूल स्रोत का परिष्कार करना—ये दोनों काम जरूरी हैं। अहिंसा के क्षेत्र में काम करने वाले लोगों का ध्यान जितना वर्तमान समस्या को सुलझाने के प्रति है उतना मूल स्रोत के परिष्कार के प्रति नहीं है। हमारी दृष्टि में अहिंसा के विकास में यह बहुत बड़ी बाधा है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

शस्त्रीकरण, युद्ध, निशस्त्रीकरण, युद्धवर्जना, शिक्षा, अर्थव्यवस्था ये सब सरकार के अधिकार क्षेत्र में है। जनता से इनका कोई संबंध नहीं है। सत्ता की कुर्सी पर बैठे लोग अहिंसा की बात को ध्यान से सुनें, ऐसा कम संभव है। हमें अपनी बात, अहिंसा की बात जनता तक पहुंचानी है। उस जनता तक जो शस्त्रीकरण या निःशस्त्रीकरण का निर्णय लेने वालों के भाग्य का निर्णय कर सकती है। इसके लिए गहन आस्था, तीव्र अध्यवसाय और सतत् साधना की जरूरत है। हमें विश्वास है कि अहिंसा के क्षेत्र में काम करने वाले व्यक्ति में इन सब का उदय होगा।

विश्व शांति और अहिंसा

आज हम बहुत निकट आ गए है। दूरियां कम हो गई हैं। पहले हम व्यक्ति की बात सोचते थे, फिर समाज की। आजकल हम विश्व की बात सोचते हैं। यह क्रमिक विकास व्यक्ति से समाज और समाज से विश्व बहुत महत्त्वपूर्ण है। हम यथार्थ को न भुलाएं। चेतना का केन्द्र भी व्यक्ति है। व्यक्ति की चेतना का केन्द्र भी व्यक्ति है और सामूहिक चेतना का केन्द्र भी व्यक्ति है। व्यक्ति की चेतना का परिष्कार किए बिना विश्व शांति का सपना पूर्ण नहीं हो सकता है। शांति की बात व्यवस्था के साथ चले तो व्यक्ति को गौण किया जा सकता है। व्यवस्था का कमजोर या शक्तिशाली पहलू है—नियंत्रण। उसके बिना व्यवस्था नहीं चलती है। नियंत्रण के साथ शांति की पौध पनप नहीं सकती। चाहे पहले करें या चाहे अन्त में, व्यक्ति-व्यक्ति में सामूहिक चेतना को जगाना ही विश्व शांति का मूल मंत्र है। इस सामूहिक चेतना का पुराना नाम समता की चेतना है।

नियंत्रण की अवधारणा के साथ सैनिक शासक और तानाशाह पनपते रहे हैं। हम राजतंत्र से लोकतंत्र तक पहुंचे हैं। इस विजययात्रा का मूल्य कम नहीं है। इससे अगली यात्रा शांतितंत्र की होनी चाहिए। लोकतंत्र में जो शासक आते हैं उनमें अहिंसा के प्रति आस्था जरूरी है। लोकतंत्र और अहिंसा में निकट संबंध है, पर आज लोकतंत्रीय शासन को भी तानाशाही के आस-पास पहुंचा दिया गया है। शांतितंत्र की प्रणाली लोकतंत्र से भिन्न नहीं होगी। किन्तु उसका शासक अहिंसा में आस्था रखने वाला हो—यह अनिवार्य शर्त होगी। अब राजनीतिक प्रणाली का प्रयाण लोकतंत्र से शांतितंत्र की दिशा में होना चाहिए। उसी अवस्था में हम विश्व शांति की कल्पना कर सकते हैं।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अहिंसा : विकास का व्यावहारिक कार्यक्रम

अनेक अन्तर्राष्ट्रीय कॉन्फ्रेंस विश्व शांति के लिए आयोजित हो रही है। कॉन्फ्रेंस से विश्व शांति हो जाए तो इससे बड़ा सहज सुलभ कोई वरदान नहीं हो सकता। सरकारें भी विश्व शांति के लिए कॉन्फ्रेंस आयोजित करती हैं और वे ही शस्त्रीकरण के लिए चुपचाप काम भी करती जाती हैं। यह दोहरा रूप एक भ्रांति पैदा कर रहा है। एक ओर शांति का प्रयत्न, दूसरी ओर उसकी जड़ में प्रहार करने वाला शस्त्रों के विकास का प्रयत्न। किन्तु यह प्रयत्न सरकारी नहीं है। यह विश्व शांति के लिए जनता की आकांक्षा से निकला हुआ प्रयत्न है। जनता की आकांक्षा है—युद्ध न हो। उसकी आय से प्राप्त धनराशि का शस्त्रों के लिए प्रयोग न हो। इस आकांक्षा को सरकार पूरा नहीं करने देती। इस कॉन्फ्रेंस की निष्पत्ति जन-जागरण अभियान के रूप में होनी चाहिए।

आज अहिंसा का कोई शक्तिशाली मंच नहीं है। अहिंसा के क्षेत्र में काम करने वाले लोग भी बिखरे हुए हैं। उनमें न कोई संपर्क है और न एकत्व का भाव। परस्पर विरोधी विचार वाले राष्ट्रों ने संयुक्त राष्ट्रसंघ को एक मंच बना लिया। वहां बैठकर वे मिलते हैं, बातचीत करते हैं और समस्या का समाधान खोजते हैं। अहिंसा में आस्था रखने वाले न कभी मिलते हैं, न कभी बातचीत करते हैं और न कभी समस्या का सामूहिक समाधान खोजते हैं। इस कॉन्फ्रेंस से एक नई दिशा उद्घाटित हुई है। एक ऐसे विश्व-व्यापी अहिंसा मंच—अहिंसा सार्वभौम की पृष्ठभूमि तैयार हो, जहां बैठकर हिंसा की विभिन्न समस्याओं पर सामूहिक चिंतन किया जा सके और हिंसक घटनाओं की समाप्ति के लिए निर्णय लिए जा सकें। विश्व शांति की दिशा में यह एक शक्तिशाली चरण होगा।

अहिंसा के क्षेत्र में काम करने वाले लोग अहिंसा की दृष्टि से प्रशिक्षित भी कम हैं और उसके लिए जितनी साधना चाहिए, वह भी प्रतीत नहीं होती। इस कमी की पूर्ति के लिए भी एक कार्यक्रम बनाना चाहिए, जिससे तपे हुए कार्यकर्त्ता इस क्षेत्र में आएं और अहिंसा की बात जन-जन तक पहुंचाएं।

शांति सेना का यत्र-तत्र निर्माण हुआ है। किन्तु व्यापक स्तर पर उसका निर्माण नहीं हुआ है। समर्थ शांति सेना के निर्माण की संभावना पर चिंतन किया जाए।

अहिंसा का यह त्रिसूत्री कार्यक्रम विश्व शांति के लिए बहुत उपयोगी हो सकता है। यह हमारे चिंतन का केन्द्रीय बिन्दु बनना चाहिए।

दिनांक ५ से ७ दिसम्बर १९८८ को "शांति एवं अहिंसक-उपक्रम" पर लाडनूं में आयोजित प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में प्रदत्त गणाधिपति श्री तुलसी का वक्तव्य।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

शांति और अहिंसा-उपक्रम

— गणाधिपति तुलसी

अंधकार था, है और रहेगा। इसे दूर करने के लिए मनुष्य ने दीया जलाया, आज भी जलता है और भविष्य में जलता रहेगा। अंधकार की सत्ता त्रैकालिक है तो प्रकाश का अस्तित्व भी त्रैकालिक है। ऐसा कभी नहीं होता, जब अंधकार हो और प्रकाश का कोई उपाय न हो। अंधकार जितना सघन होता है, प्रकाश की अपेक्षा उतनी ही अधिक होती है। अंधकार रहेगा ही—यह सोचकर मनुष्य कभी दीया जलाना बंद नहीं करता। अंधकार के विरुद्ध उसका संघर्ष तब तक चलता रहेगा जब तक उसे प्रकाश की आवश्यकता रहेगी।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

हिंसा थी, है और रहेगी। अहिंसा के लिए प्रयत्न हुआ है, हो रहा है और होता रहेगा। हिंसा और अहिंसा—दोनों की सत्ता त्रैकालिक है। हिंसा जितनी प्रबल होगी, अहिंसा के लिए उतना ही तीव्र प्रयत्न करना होगा। संसार से हिंसा कभी समाप्त नहीं होगी, यह सोचकर मनुष्य की अहिंसक चेतना ने कभी उच्छ्वास लेना बंद नहीं किया। हिंसा के मुकाबले में अहिंसा की शक्ति कम नहीं है। अपेक्षा है उस शक्ति को जगाने की। शक्ति का जागरण तभी संभव है, जब उसका बोध हो, शोध हो, प्रशिक्षण हो और प्रयोग हो।

संभव है अहिंसा का प्रशिक्षण

हिंसा मनुष्य के संस्कारों में रहती है। निमित्तों का योग पाकर वह प्रकट होती है। *आचारांग सूत्र* में हिंसा के तीन कारण बताए गए हैं—प्रतिशोध, सुरक्षा और आशंका। कारण कुछ भी रहे हों, हिंसा का प्रशिक्षण नियमित रूप से चलता है। उसमें

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

उत्तरोत्तर दक्षता बढ़ रही है। उसके लिए नए-नए साधन विकसित हो रहे हैं। आगे-से-आगे नई तकनीक खोजी जा रही है। अनेक प्रसंगों में उसका खुला प्रयोग भी हो रहा है। लगता है महावीर की इस वाणी को समर्थन मिल रहा है कि *"अत्थि सत्थं परेण परं"*—शस्त्र आगे से आगे तीक्ष्ण होता है, उसकी परम्परा चलती है।

अहिंसा के प्रयोग की बात तो दूर, उसके प्रशिक्षण की भी कोई व्यवस्था नहीं है। अहिंसा का उपदेश बहुत दिया जाता है, उसके गुणगान बहुत किए जाते हैं, पर उसके प्रशिक्षण की बात कौन सोचते हैं। ऐसी स्थिति में यह आशा कैसे की जा सकती है कि अहिंसा आएगी और वह जीवन-शैली से जुड़ेगी? अधिक लोगों को तो यह विश्वास ही नहीं है कि अहिंसा कुछ कर सकती है या उसका प्रशिक्षण दिया जा सकता है। हमारी मान्यता यह है अहिंसा में असीम शक्ति है और उसका प्रशिक्षण दिया जा सकता है।

अहिंसा का सैद्धान्तिक स्वरूप

अहिंसा-प्रशिक्षण के स्वरूप का निर्धारण किया जाए तो उसके दो रूप हो सकते हैं—सैद्धान्तिक और प्रायोगिक। सैद्धान्तिक प्रशिक्षण में दार्शनिक सत्यों का अवबोध कराया जाता है। अहिंसा के दार्शनिक पहलू अनेक हैं। उन सबकी चर्चा में प्रशिक्षण की बात बिखर सकती है। इस दृष्टि से यहां कुछ ऐसे बिन्दुओं को उल्लिखित किया जा रहा है, जिनको समझे बिना अहिंसा के प्रशिक्षण का कोई आधार भी नहीं बनता। दार्शनिक पृष्ठभूमि पर अहिंसा की मूल्यवत्ता प्रमाणित करने वाले पांच बिन्दु हैं—

- आत्मा का अस्तित्व
- आत्मा की स्वतंत्रता
- आत्मा की समानता
- जीवन की सापेक्षता
- सह-अस्तित्व

आत्मा है। प्रत्येक आत्मा का सुख-दुःख अपना-अपना है। इस दृष्टि से आत्मा स्वतंत्र है। गणित की भाषा में आत्मा अनन्त हैं। उनकी कर्मकृत अवस्थाएं भिन्न-भिन्न हैं। पर स्वरूप की अपेक्षा से सब आत्माएं समान हैं। समानता का यह सिद्धान्त मनुष्य तक ही सीमित नहीं है। संसार में जितने प्राणी हैं, उन सबकी आत्मा समान है। कोई भी व्यक्ति निरपेक्ष रहकर अपने अस्तित्व को नहीं बचा सकता। इसी कारण जीवन को

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सापेक्ष माना गया है। सापेक्षता का सिद्धान्त प्रकृति के प्रत्येक कण पर लागू होता है। कहीं पर वृक्ष का एक पत्ता भी टूटकर गिरता है तो उसका प्रभाव पूरी सृष्टि पर पड़ता है। "मैं रहूंगा या वह रहेगा", अहिंसा की परिधि में इस चिन्तन को स्थान नहीं मिल सकता। "मैं भी रहूंगा, तुम भी रहोगे। यह भी रहेगा, वह भी रहेगा"—इस प्रकार सह-अस्तित्व की भाषा में सोचना अहिंसा का दर्शन है।

अन्तर्जगत् में अहिंसा के प्रयोग

अहिंसा के सैद्धान्तिक पक्ष को समझने के बाद उसके प्रायोगिक स्वरूप को समझना आवश्यक है। प्रायोगिक के दो बिन्दु हैं—अन्तर्जगत् और बाह्य जगत्। अन्तर्जगत् में प्रशिक्षण का महत्त्वपूर्ण तत्त्व है—संवेग-संतुलन (Balance of Emotions)। मनोविज्ञान की भाषा में मानसिक उथल-पुथल या उद्वेलन की अवस्था का नाम संवेग है। भय, क्रोध, जुगुप्सा, कामुकता, सुख, दुःख आदि संवेग प्रतिक्रियात्मक भावों के रूप में अपना प्रभाव दिखाते हैं।

मनुष्य जब तक वीतराग नहीं बन जाता, संवेगों के प्रभाव से मुक्त नहीं हो सकता। पर इनका संतुलन न होने से अनेक प्रकार की समस्याएं पैदा हो जाती हैं। संवेगों को संतुलित करने की प्रकिया को यहां उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है—

क्रोध एक संवेग है। इसे नियंत्रित करने के लिए *इमोशनल एरिया*—भाव-क्षेत्र पर ध्यान के प्रयोग करवाए जाते हैं। चैतन्य-केन्द्र प्रेक्षा और लेश्याध्यान के प्रयोग इसके लिए कार्यकारी प्रमाणित हुए हैं।

प्रमाद एक संवेग है। यह जागरूकता घटाता है। इसको नियंत्रित करने के लिए चैतन्य-केन्द्र प्रेक्षा, लेश्याध्यान और दीर्घ-श्वास प्रेक्षा के प्रयोग निर्धारित हैं। नशा-मुक्ति के लिए भी इन प्रयोगों को काम में लिया जाता है।

हीन भावना और अहं भावना ऐसे संवेग हैं, जो मनुष्य के समग्र व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं। इनके प्रभाव को क्षीण करने के लिए अनुकंपी और परानुकंपी—Sympathetic & Parasympathetic नाड़ी-तंत्र पर ध्यान के विशेष प्रयोग करवाए जाते हैं।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

बाह्यजगत् में प्रशिक्षण के तीन बिन्दु

बाह्यजगत् में अहिंसा के प्रायोगिक प्रशिक्षण की भूमिका बहुत विस्तृत है। मुख्य रूप में उसके तीन बिन्दु हो सकते हैं—

- मानवीय संबंधों का परिष्कार या विकास।
- प्राणी जगत् के साथ संबंधों का विस्तार।
- पदार्थ जगत के साथ संबंधों की सीमाएं।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह समूह में रहता है। वहां वह अनेक प्रकार के संबंध जोड़ता है। संबंध जोड़ना कोई कठिन काम नहीं है। कठिन है उनका समुचित निर्वाह। कठिनाई का कारण है मनुष्य की स्वार्थपरायण मनोवृत्ति। स्वार्थ की आंख से देखने वाला और स्वार्थ की धरती पर चलने वाला परमार्थ की बात कैसे सोच सकता है? अहिंसा परमार्थ का दर्शन है। अहिंसा में विश्वास करने वाला व्यक्ति संबंधों की आंच पर स्वार्थ की रोटी नहीं सेक सकता। स्वार्थवाद या व्यक्तिवाद के कारण सम्बन्धों के संसार में जो जहर घुल रहा है, उससे बचने के लिए अहिंसा का प्रशिक्षण अत्यन्त आवश्यक है।

मानवीय संबंधों का परिष्कार

मनुष्य के दृष्टिकोण को दो रूपों में देखा जाता है—मानवीय और अमानवीय। एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य के प्रति कैसा संबंध या व्यवहार होना चाहिए, नीतिसूत्रों में यह बात निर्धारित होती है। उसके अनुसार व्यवहार करने वाले व्यक्ति का दृष्टिकोण मानवीय कहलाता है। जो व्यक्ति दूसरे के हितों की उपेक्षा करता हो, उन्हें कुचल देता हो, किसी का शोषण करता हो या सताता हो, यह पाशवी या दानवी वृत्ति कहलाती है। इस वृत्ति को बदलने से ही मानवीय संबंधों का परिष्कार हो सकता है।

मानवीय संबंधों को कई ईकाइयों में विभक्त किया जा सकता है। हम यहां मुख्य रूप से तीन इकाइयों की चर्चा कर रहे हैं—पारिवारिक संबंध, सामाजिक संबंध और व्यावसायिक संबंध। पिता-पुत्र, पति-पत्नी, भाई-भाई, सास-बहु, देवरानी-जेठानी, मां-बेटी आदि पारिवारिक संबंध हैं। इनमें मानवीय दृष्टिकोण का विकास हो तो किसी को मारने, पीटने, सताने या प्रताड़ित करने का प्रसंग उपस्थित नहीं हो सकता।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सामाजिक संबंधों का दायरा बहुत विस्तृत होता है। पड़ौसी से लेकर दूर-दराज बसने वाले समाज के हर व्यक्ति के साथ किसी न किसी रूप में संबंध रहता है। संबंधों की स्थापना में स्वार्थ की प्रेरणा न हो,और स्वार्थ में बाधा पहुंचने पर संबंध तोड़ने की परिस्थिति भी पैदा न हो, यह अहिंसा की प्रेरणा है। जाति, रंग, लिंग, वर्गभेद आदि को आधार बनाकर मनुष्य-मनुष्य के बीच जो दूरियां बढ़ती जा रही हैं वे किसी न किसी रूप में हिंसा को बढ़ावा दे रही हैं। इन सब भेदों से ऊपर एक तत्त्व है, वह है मनुष्यता। "यह भी मनुष्य है, मैं भी मनुष्य हूं। मै इससे जिस प्रकार के व्यवहार की अपेक्षा रखता हूं, इसको भी मुझसे वैसी ही अपेक्षा है"। चिन्तन के इस धरातल पर ही मानवीय संबंधों का विकास संभव हैं।

मालिक-कर्मचारी, व्यापारी-मुनीम, स्वामी-सेवक, भागीदार-भागीदार आदि संबंध व्यवसाय जगत् से जुड़े हुए हैं। इन संबंधों में मानवीय दृष्टिकोण न हो तो मालिक शोषण करता है और श्रमिक श्रम से जी चुराता है। चार डिग्री बुखार में काम करने की बाध्यता और बहानेबाजी की आदत इसी परिवेश में पलती है। इस क्षेत्र में सहानुभूति और संविभाग के प्रशिक्षण से अनेक प्रकार की समस्याओं से राहत मिल सकती है।

प्राणी-जगत् के साथ संबंधों का परिष्कार

मनुष्य अपने आपको संसार का सबसे श्रेष्ठ प्राणी समझता है। इसी कारण अन्य प्राणियों के प्रति उसका दृष्टिकोण बहुत उदार नहीं होता। वह अपने जीवन के लिए प्राणियों की हिंसा करता है। हिंसा के दो रूप हैं—अपरिहार्य और परिहार्य। उसके द्वारा की जा रही अपरिहार्य हिंसा भी हिंसा ही है। उसे अपरिहार्यता की दृष्टि से एक ओर किया जा सकता है। किन्तु अपरिहार्य या अनावश्यक हिंसा प्राणी-जगत् के प्रति उसके अमानवीय दृष्टिकोण का परिणाम है।

प्राणी-जगत् के साथ मनुष्य के संबंध कैसे होने चाहिए—इस संदर्भ में मनुष्य को प्रशिक्षण दिया जाता तो परिहार्य या अनावश्यक हिंसा नहीं होती, प्राणियों के प्रति निर्दय व्यवहार नहीं होते और मानव समाज में विलासिता नहीं पनपती। क्रूर हिंसा-जनित प्रसाधन सामग्री और परिधानों का उपयोग वे ही लोग कर सकते हैं जो सब प्राणियों के साथ तादात्म्य का अनुभव नहीं करते। कुछ लोग मनोरंजन के लिए पशुओं को आपस में लड़ाते हैं। थोड़े से लोगों का क्षणिक मनोविनोद प्राणी-जगत् के

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रति क्रूरता का खुला प्रदर्शन है। अहिंसा का प्रशिक्षण मनुष्य को इस प्रकार की क्रूरता से विरत कर सकता है।

समस्त प्राणी-जगत् के प्रति उदार या मानवीय दृष्टिकोण रखने वाला व्यक्ति प्रकृति से भी अधिक छेड़छाड़ नहीं कर सकता। पर्यावरण विज्ञान प्रकृति के किसी भी हिस्से में हस्तक्षेप को उचित नहीं मानता। उसकी यह अवधारणा बहुत प्राचीन है। भगवान् महावीर ने ढाई हज़ार वर्ष पहले अहिंसा और संयम के जो सूत्र दिए, उनके अनुसार प्रकृति के एक कण को भी क्षतिग्रस्त नहीं किया जा सकता।

पदार्थ-जगत् के साथ संबंधों की सीमाएं

मनुष्य की एक मौलिक मनोवृत्ति है—अधिकार की भावना। इसी भावना से प्रेरित होकर वह परिग्रह का संग्रह करता है। परिग्रह की चेतना मनुष्य के अस्तित्व को समाप्ति की ओर अग्रसर करने वाली है। एरिक फ्रोम् ने एक पुस्तक लिखी है—"टू हेव और टू बी"। (To have or to be)—अधिकार अथवा अस्तित्व। मनुष्य को इन दोनों में से एक का चुनाव करना है। उसे अपने अस्तित्व को बचाकर रखना है तो अधिकार की भावना का त्याग करना होगा।

मनुष्य के सामने यह एक दोहरी समस्या है। एक ओर पदार्थ के बिना उसका काम नहीं चल सकता। दूसरी ओर ममत्व या अधिकार की भावना उसके अस्तित्व के लिए खतरा बन रही है। ऐसी स्थिति में प्रशिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण बिन्दु है—पदार्थ के प्रति अमूर्च्छा या अनासक्ति का विकास। पदार्थ के प्रति दृष्टिकोण में बदलाव आते ही उसके संग्रह और उपभोग की सीमाएं अपने आप स्वीकृत हो जाती हैं।

अन्तिम शरण आदिम शरण बने

अहिंसा के प्रशिक्षकों और प्रशिक्षुओं को भगवान् महावीर का उद्घोष *"अहिंसा सव्वभूयखेमंकरी"* याद रखना है। उन्होंने कहा—अहिंसा सब प्राणियों के लिए कल्याणकारिणी है। यह उद्घोष उस समय अधिक सार्थक और प्रासंगिक लगता है, जब युद्ध की विनाशलीला से थके-हारे और डरे-सहमे लोग अहिंसा की शरण स्वीकार करते हैं, युद्ध-विराम की घोषणा करते हैं। यदि हिंसा या युद्ध में शरण बनने की क्षमता होती तो युद्ध-विराम की बात क्यों सोची जाती। अंतिम शरण युद्ध नहीं, युद्ध-विराम है। ये अंतिम शरण आदिम शरण बने, इसके लिए आवश्यक है युद्ध को विराम देने के

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

स्थान पर युद्ध के प्रारम्भ को ही विराम मिले। कुछ लोग मानते है कि अहिंसा आदमी को कायर बनाती है, भयभीत बनाती है। मैं उनसे पूछना चाहता हूं कि यदि अहिंसा कायरता है तो अन्त में उसकी शरण क्यों ली जाती है? क्या कायरता किसी की शरण बन सकती है। महावीर ने भय और कायरता को हिंसा माना है। अहिंसा कायरों का नहीं, वीरों का हथियार है। शौर्यवती और वीर्यवती अहिंसा ही समूचे संसार को त्राण और शरण दे सकती है। काश! संसार उसकी क्षमता को पहचाने और उसे आदिम शरण के रूप में स्वीकार करे।

प्रशिक्षण की पद्धति शिक्षा के साथ जुड़े

अहिंसा के प्रशिक्षण हेतु ऊपर निर्दिष्ट कुछ बिंदुओं को ही चुना गया है, क्योंकि हिंसा के तीन मुख्य कारण हैं—

- वैचारिक अभिनिवेश,
- पदार्थ के प्रति आसक्ति,
- मानवीय संबंधों में क्रूरता।

मनुष्य के दैनंदिन जीवन में इन बिन्दुओं से संबंधित जो प्रसंग उपस्थित होते हैं, उन्हें टालने का कार्यकारी उपाय एक ही है कि मनुष्य को प्रशिक्षित कर दिया जाए। बहुत बार ऐसा भी होता है कि व्यक्ति अज्ञानवश हिंसा में प्रवृत्त हो जाता है। हिंसा के परिणामों से परिचित न होने के कारण भी ऐसा हो सकता है। इसलिए अहिंसा के प्रशिक्षण की प्रक्रिया को काफी सघन बनाना अपेक्षित है। कुछ व्यक्तियों अथवा गांवों को चुनकर प्रयोग करना ही पर्याप्त नहीं है। परीक्षण के तौर पर ऐसा किया जा सकता है, पर प्रशिक्षण-कार्यक्रम को व्यापक बनाने के लिए इसे शिक्षा के साथ नत्थी करना होगा।

जितने भी विद्यालय और महाविद्यालय हैं, उनमें अहिंसा को अनिवार्य विषय के रूप में स्वीकार किया जाए और *थ्योरिटिकल ट्रेनिंग* के साथ *प्रेक्टिकल ट्रेनिंग* पर भी ध्यान केन्द्रित किया जाए तो इस विषय को और अधिक व्यापक बनाया जा सकता है।

"शांति एवं अहिंसक-उपक्रम" पर राजसमन्द में आयोजित द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन, १७-२१ फरवरी १९९१, में प्रदत्त गणाधिपति श्री तुलसी का उद्घाटन सत्र में उद्बोधन।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अहिंसा प्रशिक्षण और जीवन मूल्य

— आचार्य महाप्रज्ञ

मूल्यों की समस्या एक जागतिक समस्या है। मूल्यों का ह्रास हो रहा है। प्रत्येक चिंतनशील व्यक्ति इस चिंता से व्याकुल है। उनकी प्रतिष्ठा हो, यह सबकी आकांक्षा और अपेक्षा है। मूल्यों का ह्रास क्यों हो रहा है, यह अन्वेषण का विषय है। वे पुनः प्रतिष्ठित कैसे हों, यह हमारे कर्तव्य का विषय है। असीम आर्थिक महत्त्वाकांक्षा और सुख-सुविधावादी दृष्टिकोण ने मूल्यों का ह्रास किया है। येनकेन प्रकारेण साधन जुटाने की मनोवृत्ति और मूल्यों की प्रतिष्ठा—दोनों एक साथ नहीं चल सकते। साधन शुद्धि का विचार जितना क्षीण होता है, मूल्यों का स्तर उतना ही नीचे आ जाता है। नैतिक मूल्य और आध्यात्मिक मूल्य—दोनों साधन-शुद्धि के साथ अनिवार्य रूप से जुड़े हुए है। इन दोनों मूल्यो के बिना मानवीय मूल्यों की स्पष्ट व्याख्या ही नहीं की जा सकती।

सम्यग् दर्शन

अपरिग्रह और अहिंसा आध्यात्मिक मूल्य हैं। प्रामाणिकता अथवा ईमानदारी नैतिक मूल्य हैं। इनकी प्रतिष्ठा साधन-शुद्धि सापेक्ष दृष्टिकोण होने पर ही की जा सकती है। इस अर्थ में कहा जा सकता है अनेकांत अथवा सापेक्ष दृष्टिकोण मूल्यों का मूल्य है। वह सम्यग् दर्शन है। उसके बिना सम्यग् आचार की कल्पना नहीं की जा सकती। अहिंसा के प्रशिक्षण की आधारभूमि सम्यग्-दर्शन है। दृष्टिकोण को बदले बिना अहिंसा के विकास का प्रयत्न वैसा है, जैसे कोई आदमी बीज बोए बिना फसल खडी करना चाहता है। क्या हमारा दृष्टिकोण धन और धन-संग्रह के प्रति यथार्थवादी

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

है ? क्या हमारा दृष्टिकोण वस्तु-भोग के प्रति यथार्थवादी है ? यदि है, तो अहिंसा प्रशिक्षण से अहिंसा के बीज की बुआई हो जाएगी।

आकर्षण का कारण

वर्तमान विश्व एकांगी दृष्टिकोण की समस्या में उलझा हुआ है। आर्थिक और भौतिक विकास की एकांगी अवधारणा ने हिंसा के आचरण को बढ़ावा दिया है! उस दृष्टिकोण को बदले बिना अहिंसा का आचरण बढ़े, इसकी संभावना नहीं की जा सकती। इन दशकों में अहिंसा के प्रति जो आकर्षण बढ़ा है, वह हिंसा से उत्पन्न समस्या के कारण बढ़ा है। हत्या, आतंक, संहारक शस्त्रों का निर्माण, हिंसक संघर्ष और युद्ध—ये हिंसक समस्याएं समाज की शांति को भंग करती हैं। सचमुच शांति भंग हो रही है, इसलिए अहिंसा के प्रति आकर्षण बढ़ा है। सबको लग रहा है—वर्तमान की अशांति को मिटाने का सबसे सुन्दर समाधान अहिंसा है।

अवधारणा बदले

अहिंसा हिंसा से उत्पन्न समस्याओं का समाधान है, इसमें कोई संदेह नहीं है पर अनेकांत दृष्टिकोण का विकास हुए बिना वह समाधान नहीं बनती। इस सच्चाई को हम कैसे झुठलाएंगे कि आज के मनुष्य का दृष्टिकोण जितना पदार्थ सापेक्ष है, उतना मनुष्य सापेक्ष अथवा प्राणी सापेक्ष नहीं है। वह पदार्थ के लिए मनुष्य के प्रति क्रूर व्यवहार कर सकता है, प्राणी के प्रति निर्मम हो सकता है। इस स्थिति में अहिंसा का मूल्य कैसे प्रतिष्ठित किया जाए ? जिस अवधारणा ने हिंसा को बढ़ावा दिया है, उस अवधारणा को कैसे बदला जा सकता है ? हमारा मनोबल विकसित हो, संकल्प बल प्रकृष्ट हो तो अवश्य बदला जा सकता है। उसे बदलने के लिए ही अहिंसा का प्रशिक्षण आवश्यक है।

प्रशिक्षण का उद्देश्य

अहिंसा के प्रशिक्षण का प्रारम्भ बिन्दु है, हृदय-परिवर्तन अथवा मस्तिष्कीय परिवर्तन। यह परिवर्तन हिंसा के प्रति नहीं, पदार्थ के प्रति होगा। हमारा निश्चित मत है—अपरिग्रह की समस्या को छोड़कर हम हिंसा की समस्या पर विचार नहीं कर

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सकते। आग्रहवश विचार करें तो भी उसकी सार्थकता नहीं होगी। अहिंसा प्रशिक्षण का उद्देश्य है—समता के मूल्य का विकास। उसके लिए अपरिग्रह, अहिंसा और अनेकांत—यह त्रिकोणात्मक मूल्य है। इसके द्वारा ही समता के मूल्य को प्रतिष्ठित किया जा सकता है।

यह अहिंसा प्रशिक्षण का हमारा विनम्र प्रयत्न एक नई दिशा की संयोजना में सफल हो। हम इस संकल्प को शक्तिशाली बनाएं और मंगल कामना करें—अहिंसा के मूल्य की प्रतिष्ठा करने के लिए हमारे चरण आगे बढ़ें।

द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के उद्घाटन सत्र में विशेष वक्तव्य।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अहिंसा का प्रशिक्षण

— गणाधिपति तुलसी

अहिंसा मेरा जन्मजात संस्कार है। जैन परिवार में जन्म लेने का अर्थ अहिंसा के वातावरण में पलना-पुसना। संयोगवश ग्यारह वर्ष की अवस्था में मैं जैन मुनि बना। जैन मुनि का पहला महाव्रत है– अहिंसा। व्यक्तिगत रूप में उसकी साधना शुरु हो गई। अध्ययन के साथ-साथ अहिंसा को और अधिक गहराई से पढ़ने का अवसर मिला। मैंने अनुभव किया—अहिंसा का वर्तमान समस्याओं के सन्दर्भ मे प्रयोग होना [illegible]। जहां हिंसा की शक्ति समाप्त होती है, वहां अहिंसा की शक्ति ही काम आती है। और युद्ध का तनाव, समझौता और संधि से समाप्त होता है। द्वितीय महायुद्ध समाप्त हो चुका था। उसका प्रभाव ध्वंसावशेष के रूप में विद्यमान था। उस समय लंदन (२२ जून १९४५) में विश्व धर्म सम्मेलन की आयोजना की गई। उसमें मेरा "अशान्त विश्व को शान्ति का संदेश" शीर्षक से संदेश पढ़ा गया।

अहिंसा की दिशा में व्यापक संपर्क का यह पहला चरण विन्यास था। मेरे मन में विश्व शान्ति के लिए एक तड़प सदा बनी रही। अनावश्यक हिंसा, शस्त्रीकरण और युद्ध की समाप्ति कैसे हो, इस दिशा में चिन्तन चलता रहा। शान्ति निकेतन में आयोजित विश्व शान्ति सम्मेलन के अवसर पर मेरे एक संदेश का वाचन हुआ, उसके कुछ सूत्र ये हैं—

- समाज रचना का मूल आधार सत्य और अहिंसा रहे।
- अहिंसा दार्शनिक तत्त्व के रूप में नहीं, आचरण के रूप में स्वीकार की जाए।
- अहिंसा और अपरिग्रह का वातावरण बनाया जाए।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

- व्यक्ति को संयम और आध्यात्मिकता की शिक्षा दी जाए। भौतिक शिक्षा के बिना गृहस्थ-जीवन का औचित्य पूर्ण निर्वाह नहीं होता, इसलिए सामाजिक प्राणी उसकी उपेक्षा नहीं कर सकता, नियंत्रण रखने के लिए उसके साथ आध्यात्मिक शिक्षा का होना जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है।
- अपना सिद्धान्त दूसरे पर जबरदस्ती न थोपा जाए।
- जातिवाद या साम्प्रदायिक संघर्षों को प्रोत्साहन न दिया जाए।

अहिंसा के विषय में चिन्तन और मंथन चलता गया। ईसवी सन् १९४९ में **अणुव्रत आन्दोलन** का सूत्रपात हुआ। उसे मैं अहिंसा के प्रशिक्षण की दिशा में आवश्यक चरण मानता हूं। व्रत-संकल्प शक्ति का प्रयोग है। अहिंसा के विषय में हमारा संकल्प यदि परिपक्व नहीं है तो उसके आचरण में सफलता की संभावना नहीं की जा सकती।

अणुव्रत आन्दोलन अहिंसा का आन्दोलन है। अहिंसा में निष्ठा उसकी आधारशिला है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। इससे पहले वह वैयक्तिक प्राणी है। वह अपने साथ कैसा और कैसे व्यवहार करे, इसकी आध्यात्मिक व्याख्या का नाम है, अहिंसा। वह सामाजिक प्राणी भी है, इसलिए वह समाज के साथ कैसा और कैसे व्यवहार करे, समाज के साथ उसका संबंध कैसा हो, इसकी आध्यात्मिक व्याख्या का नाम है, अहिंसा। अणुव्रत में इन दोनों पक्षों पर विचार किया गया है। अपनी हिंसा भी न हो और दूसरों की हिंसा भी न हो। जो अपनी हिंसा से नहीं बचता, वह दूसरों की हिंसा से कैसे बच सकता है? हम अहिंसा के प्रशिक्षण की बात करते समय अपने प्रति की जाने वाली हिंसा से बचने की बात को गौण न करें। लोभ, भय, क्रोध आदि के आवेश अपने प्रति की जाने वाली हिंसा के हेतु हैं। इस आवेश के परिष्कार का प्रशिक्षण अंहिसा के प्रशिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है।

आज निरपराध की हत्या एवं अनर्थ (प्रयोजन शून्य) हिंसा बढ़ रही है। इसका मुख्य हेतु है—व्यक्ति अपने प्रति होने वाली हिंसा के प्रति सजग नहीं है। व्यावसायिक हिंसा, मनोरंजन और प्रसाधन के लिए की जाने वाली हिंसा का संबंध मुख्यत: व्यक्ति से होता है। व्यक्ति की मनोवृत्ति का परिवर्तन हुए बिना उस हिंसा का विरोध संभव नहीं है। अणुव्रत आन्दोलन इस दिशा में गतिशील है कि व्यक्ति में हिंसा

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

एक आदत न बने। हिंसा के साथ अनिवार्यता का भाव जुड़ा रहे। हिंसा करना आवश्यक हो तो पहले यह विचार आए कि हिंसा करना वांछनीय नहीं है किन्तु अनिवार्यता है, इसलिए मुझे हिंसा करनी पड़ रही है। हिंसा की समस्या इसलिए विकट बन गई कि हिंसा एक आदत बनती जा रही है। हिंसा का प्रशिक्षण अर्जित आदत का निर्माण कर रहा है। यह वर्तमान युग की सबसे अधिक खतरनाक स्थिति है। आतंकवाद हिंसा के प्रशिक्षण के सहारे चल रहा है। इस समस्या पर गंभीरतापूर्वक चिन्तन अपेक्षित है।

अहिंसक समाज रचना

अहिंसक समाज रचना की कल्पना अनेक दशकों से चल रही है। अहिंसा की आस्था रखने वाले अनेक संस्थानों और प्रतिष्ठानों ने इस कल्पना को आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया है। किन्तु वह प्रयत्न अभी व्यापक नहीं बना है। इसका कारण है कि अहिंसा के क्षेत्र में काम करने वाले व्यक्ति आश्रम की सीमा को तोड़ नहीं पाए हैं। व्यापक क्षेत्र में प्रवेश किए बिना अहिंसा के विचार को जन-जन में प्रतिष्ठित नहीं किया जा सकता और उसके बिना अहिंसक समाज रचना की बात आगे नहीं बढ़ सकती। राजस्थान में अणुव्रत के कार्यकर्त्ताओं ने अणुव्रत ग्राम निर्माण के प्रयोग किए। उसकी न्यूनतम संकल्पना यह थी—

- अणुव्रत ग्राम में ९० प्रतिशत व्यक्ति अणुव्रती हों।
- कोई कोर्ट-केस न हो। मतभेद, मनभेद को पारस्परिक सद्भाव से सुलझाया जाए।
- छुआछूत, अज्ञान-अशिक्षा तथा अंधरूढ़ियों को प्रश्रय न मिले।
- बेकार, बेरोजगार और बेजमीन लोग न हों।
- गांव की स्वच्छता पर विशेष ध्यान दिया जाए।
- वैज्ञानिक उपलब्धियों की जानकारी का प्रबन्ध किया जाए।
- व्यसन-मुक्ति पर विशेष बल दिया जाए। गांव में शराब का ठेका न हो।

गुजरात में आज भी अणुव्रत ग्राम निर्माण का कार्यक्रम चल रहा है। पर इन सबको मैं सीमित प्रयोग मानता हूं। पूरे समाज को बदलने के लिए बड़े पैमाने पर

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अहिंसा के प्रशिक्षण की व्यवस्था आवश्यक है। सीमित प्रशिक्षण के द्वारा हम बड़ा परिवर्तन करना चाहें, यह संभव नहीं होगा। अहिंसा का प्रशिक्षण शिक्षा का एक अनिवार्य अंग हो तभी व्यापक प्रशिक्षण की कल्पना की जा सकती है। अभिभावक, अध्यापक और विद्यार्थी—यह त्रिकोण इसके साथ जुड़े। अहिंसा के प्रशिक्षण का यह त्रिकोणात्मक अभियान अहिंसक समाज रचना की दिशा में एक सफल चरण विन्यास हो सकता है। हमने इसके लिए जीवनविज्ञान का कार्यक्रम शुरु किया है। वह वर्तमान में प्रचलित शिक्षा की एक पूरक पद्धति है। उसमें मानसिक, भावात्मक प्रशिक्षण और आंतरिक प्रयोग की व्यवस्था है। व्यक्तित्व रूपान्तरण के लिए हमने प्रेक्षाध्यान की पद्धति का विकास किया है। वह हृदय-परिवर्तन की प्रयोगात्मक पद्धति है। वह प्रयोग सामाजिक और आर्थिक स्तर पर नहीं किंतु वैयक्तिक स्तर पर किया जाता है उससे सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक, सभी प्रणालियां प्रभावित होती हैं। जीवनविज्ञान में अणुव्रत और प्रेक्षाध्यान—दोनों के समन्वित रूप में प्रशिक्षण और प्रयोग समायोजित किए गए हैं। हमारी दृष्टि में अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान और जीवनविज्ञान—यह त्रिपदी अहिंसा अथवा हृदयपरिवर्तन के प्रशिक्षण की सुव्यवस्थित पद्धति है। इसके द्वारा प्रशिक्षित व्यक्ति सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्र में अहिंसा का व्यावहारिक प्रयोग करने में अधिक सफल हो सकता है।

विभिन्न राष्ट्रों की सरकारें युद्ध के लिए प्रशिक्षण और शोध की व्यवस्था करती हैं। वैसे अहिंसा, अहिंसक समाज रचना और विश्व शान्ति के लिए प्रशिक्षण और शोध की व्यवस्था नहीं करतीं। क्या इस एकपक्षीय व्यवस्था से हिंसा को प्रोत्साहन और अहिंसा के मूल पर कुठाराघात नहीं हो रहा है? हमारा सामूहिक संकल्प हो कि सरकारें युद्ध के प्रशिक्षण की भांति अहिंसा के प्रशिक्षण का दायित्व भी अपने पर लें। सैनिकों एवं सेना के अधिकारियो को सामरिक प्रशिक्षण के साथ-साथ अहिंसा का प्रशिक्षण भी दें। इस अवस्था में युद्ध अथवा हिंसा एक अनिवार्यता हो सकती है, किन्तु उन्माद और आवेश की उपज नहीं हो सकती। हिंसा के साथ अहिंसा का विवेक हो तो अनावश्यक हिंसा और हिंसा के अतिवाद से बहुत बचा जा सकता है। संयुक्त राष्ट्रसंघ, जो विश्व शांति की व्यवस्था के प्रति उत्तरदायी है, उसका भी सहज दायित्व बनता है कि वह अहिंसा के प्रशिक्षण की व्यापक व्यवस्था का संचालन करे।

आश्चर्य है कि विश्व भर में शिक्षा और प्रशिक्षण के हजारों-हजारों संस्थान

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

और विश्वविद्यालय हैं। अहिंसा की शिक्षा और प्रशिक्षण की व्यवस्था के लिए नगण्य सा उपक्रम कहीं कहीं होगा अथवा नहीं होगा। क्या हम इस कॉन्फ्रेंस के माध्यम से अपना संकल्प उन सब तक पहुंचाएं कि वे अहिंसा के प्रशिक्षण को अनिवार्य बनाएं? इस दिशा में हमारा सामूहिक प्रयत्न सफल और कार्यकारी बनेगा। अहिंसा की पवित्र वाणी के उच्चारण में हमारी लय और हमारा स्वर एक बन जाए—

भीयाणं पिव सरणं, पक्खीणं पिव गयणं।
तिसियाणं पिव सलिलं, खुहियाणं पिव असणं॥
समुद्दमज्झे व पोतवहणं, चउप्पयाणं व आसमपयं।
दुहट्टियाणं व ओसहिबलं, अडवीमज्झेव सत्थगमणं॥

द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में गणाधिपति श्री तुलसी का संदेश।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

ऐसे मिला मुझे अहिंसा का प्रशिक्षण

— गणाधिपति तुलसी

अहिंसा का पहला बोधपाठ

मैंने ग्यारह वर्ष की अवस्था में पूज्य कालूगणी के पास जैन मुनि की दीक्षा स्वीकार की। जैन मुनि की दीक्षा का पहला व्रत है अहिंसा और पांचवां व्रत है अपरिग्रह। दीक्षा स्वीकार करते ही पूज्य कालूगणी ने प्रतिबोध देते हुए कहा—"अब तुम मुनि बन गए हो। मुनि को हर काम जागरूकता से करना होता है। तुम्हें भी हर क्षण जागरूक रहना है। तुम्हारा पहला पग जागरूकता के साथ उठेगा। चलते समय तुम्हें देखकर चलना है। इसलिए कि तुम्हारे पैर के नीचे आकर कोई छोटा-सा जन्तु भी मर न जाए। बोलते समय तुम्हें जागरूकता के साथ बोलना है। इसलिए कि तुम्हारे शब्दों से किसी को आघात न पहुंचे। भोजन के समय तुम्हें जागरूकता से भोजन करना है। इसलिए कि तुम किसी दूसरे का अधिकार न छीन लो। तुम्हारी आस्था संविभाग में रहेगी। इसलिए कि तुम अकेले ही किसी वस्तु के स्वामित्व का दावा न करो। तुम्हें न किसी पदार्थ के प्रति मूर्च्छा करना है और न किसी प्राणी के प्रति अभिद्रोह।" मैंने मुनि बनते ही पूज्य कालूगणी से अहिंसा का यह पहला बोधपाठ पढ़ा। इससे अहिंसा में मेरी आस्था पुष्ट हुई। आस्था की वह प्रतिमा आज तक कभी भी खण्डित नहीं हुई।

अहिंसक का व्यवहार

दीक्षा स्वीकार करने के एक सप्ताह बाद मैंने *दशवैकालिक सूत्र* का पाठ शुरू किया। उसमें पढ़ा—संयम से चलो, संयम से खड़े रहो, संयम से बैठो, संयम से सोओ, संयम से खाओ और संयम से बोलो।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

जीवन की प्रत्येक क्रिया का संपादन सयंम से हो, इस बोधपाठ के साथ ही मुझे बताया गया—बिना प्रयोजन प्रकृति के किसी भी पदार्थ की छेड़छाड़ मत करो। उसका अपव्यय मत करो। संयम का साधक किसी भी वस्तु का दुरुपयोग नहीं कर सकता।

मैंने तीसरा पाठ पढ़ा—*पुढो सत्ता*—प्रत्येक प्राणी का अस्तित्व स्वतंत्र है। इसलिए तुम्हें किसी को सताने, चोट पहुंचाने और आहत करने का अधिकार नहीं है। किसी प्राणी पर हुकूमत करने और दास बनाने का भी अधिकार नहीं है। कोई व्यक्ति किसी को सताता है, चोट पहुंचाता है, आहत करता है, किसी पर हुकूमत करता है या किसी को दास बनाता है, यह उसकी अनाधिकार चेष्टा है। ऐसी चेष्टा करने वाला व्यक्ति अहिंसक नहीं हो सकता।

संस्कारों की विरासत

मैंने पूज्य कालूगणी से कोरा सिद्धान्त ही नहीं पढ़ा, मुझे उनके जीवन-व्यवहार से अहिंसा का सक्रिय प्रशिक्षण मिला। वे कभी दूसरे सम्प्रदाय के प्रति आक्षेप नहीं करते थे। ये संस्कार उन्हें विरासत में मिले थे। भगवान महावीर के समय में भी यह सिद्धान्त प्रयुक्त होता था। आर्द्रकुमार ने आजीवक सम्प्रदाय के आचार्य गोशालक से कहा—"मैं किसी व्यक्ति की गर्हा नहीं कर रहा हूं। मैं केवल उस विचार की गर्हा कर रहा हूं, जो वांछनीय नहीं है।"

आचार्य भिक्षु ने इस सिद्धान्त को आत्मसात् किया। उन्होंने किसी भी व्यक्ति या सम्प्रदाय की आक्षेपात्मक आलोचना नहीं की। पूज्य कालूगणी ने उसी परम्परा को सजीव बनाए रखा। उन्होंने शास्त्रार्थ के समय आवेश से बचने का परामर्श दिया। वे कहते थे—"शास्त्रार्थ के समय उत्तेजित होना पराजय का पहला लक्षण है। आवेशपूर्ण धर्म-चर्चा भी हिंसा है।" उनकी शान्ति और मृदुता ने मेरे मानस पर बहुत प्रभाव छोड़ा। उन्होंने मुझे जो कुछ सिखाया, व्यवहार में वैसा ही करके दिखाया। कथनी और करनी की यह संवादिता अहिंसा की विशिष्ट फलश्रुति है। अहिंसा का साधक कटु सत्य भी नहीं बोल सकता, फिर वह कटु आक्षेप कैसे लगा सकता है? इस बोधपाठ ने मुझे संयत और संतुलित रहना सिखाया।

अहिंसा की पृष्ठभूमि

अहिंसा और सत्य दोनों एक-दूसरे के पर्याय हैं। अहिंसा के बिना सत्य नहीं

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

हो सकता और सत्य के बिना अहिंसा नहीं हो सकती। सत्य की अनुपालना के लिए मुझे प्रशिक्षण मिला—"डरो मत। न बुढ़ापे से डरो, न रोग से डरो। न शोक-संताप से डरो और न मौत से डरो। भूत-प्रेत उसी को सताते हैं, जो डरता है। डरा हुआ व्यक्ति भय से निस्तार नहीं पा सकता। वह तप और संयम को भी छोड़ देता है।" मैंने अपने गुरुवर से अभय का बोधपाठ पढ़ा, तब मैं समझ सका कि अभय पीठिका है, अहिंसा और सत्य की। इसके बिना अहिंसा और सत्य की कल्पना ही नहीं की जा सकती।

जिस व्यक्ति का परिग्रह या पदार्थ-संग्रह के प्रति मोह होता है, वह अभय नहीं हो सकता। उस अवस्था में अहिंसा कैसी होगी? भय अपने आप में हिंसा है। डराना हिंसा है, तो डरना भी हिंसा है। इसलिए न डरो और न डराओ। यह अभय का उभयपक्षीय सिद्धान्त है। अपरिग्रह का मूल्य इसीलिए है कि उसके बिना अभय की बात कभी संभव नहीं होती। पदार्थ के प्रति मूर्च्छा होती है, तभी उसके साथ भय उपजता है और उसकी प्राप्ति में हिंसा होती है। मरने का भय भी इसीलिए है कि शरीर के प्रति मूर्च्छा रहती है। मुर्च्छा अपने आप में परिग्रह है।

हिंसा और परिग्रह को कभी विभक्त करके नहीं देखा जा सकता। इसी प्रकार अहिंसा और अपरिग्रह को विभक्त करके नहीं देखा जा सकता। ये सब बातें मुझे पूज्य कालूगणी से सीखने को मिलीं।

अभय का प्रशिक्षण

अहिंसा की पृष्ठभूमि है अभय और उसका सुरक्षा-कवच है सहिष्णुता। पूज्य कालूगणी ने अपने जीवन-व्यवहार से इन दोनों का प्रशिक्षण दिया। उन्होंने अभय और सहिष्णुता का अनुत्तर विकास किया था। मेरे लिए वह सहज बोधपाठ बन गया।

बीकानेर में महाराजा गंगासिंह जी राज्य कर रहे थे। वे बहुत प्रतापी, तेजस्वी और दृढ संकल्पवाले शासक माने जाते थे। पूज्य कालूगणी सुजानगढ़ में चातुर्मास बिता रहे थे। महाराजा गंगासिंह सुंजानगढ आए। उनका कालूगणी के दर्शन करने का कार्यक्रम था। किसी कारणवश वे स्थान के भीतर नहीं गए। कार में बैठे-बैठे उन्होंने बाहर से ही हाथ जोड़कर नमस्कार किया। पूज्य कालूगणी का ध्यान उस ओर नहीं गया। श्रावकों के मन में एक खलबली-सी मच गई।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

महाराजा ने नमस्कार किया और कालूगणी ने सामने तक नहीं देखा। अब क्या होगा? महाराजा क्रुद्ध हो जाएंगे। यह अच्छा नहीं हुआ। अब क्या करना चाहिए? मंत्रीमुनि और कुछ श्रावकों ने इस चिंतन में रात का बहुत भाग बिता दिया। पूज्य कालूगणी समय पर लेट गए। न कोई चिन्ता, न कोई भय। आपने उन सबसे कहा—"इतनी चिन्ता क्यों करते हो? हमने जानबूझ कर किसी की उपेक्षा नहीं की। हमें ज्ञात ही नहीं हुआ तो हम क्या करते? अब हम किस बात के लिए भयभीत बनें?" उनके जीवन में यह अभयवृत्ति किसी भी प्रसंग में देखी जा सकती थी।

सहिष्णुता की विजय

बीकानेर में चातुर्मास था। वहां जैनों के एक सम्प्रदाय ने पूज्य कालूगणी का प्रचण्ड विरोध किया। विरोध भी उतना तीव्र कि उसमें आयस अस्त्रों का प्रयोग तो नहीं हुआ, पर गालियों के अस्त्रों का प्रचुर मात्रा में प्रक्षेपण किया गया। विरोध की उग्रता देख पूज्य कालूगणी ने साधु-साध्वियों को एकत्रित किया। उनको निर्देश देते हुए आपने कहा—"कोई कुछ भी कहे, तुम्हें मौन और शान्त रहना है। कोई किसी प्रकार की उत्तेजना न करे। अपने रास्ते आना और अपने रास्ते जाना। तुम्हारी ओर जो तीर फेंके जाएं, उन्हें शान्ति से सहना है। किन्तु असहिष्णुता का प्रतिकार असहिष्णुता से नहीं करना है।"

किसी प्रसंग में एक मुनि ने आवेशात्मक प्रतिकार किया। ज्ञात होने पर उन्हें प्रायश्चित् दिया गया। इससे अन्य सभी मुनियों को सजग रहने का अवसर मिल गया। सहिष्णुता का परिणाम आया। आवेश हारा, अनावेश की विजय हुई। आक्रोश हारा, शान्ति की विजय हुई। इस सहिष्णुता के पाठ ने मुझे इतना प्रभावित किया कि मैं उसी बीकानेर में एक भंयकर घटना को टालने में सफल हुआ।

एक दुर्घटना टली

मुझे आचार्य बने एक-सवा वर्ष ही हुआ था। उस वर्ष का चातुर्मास बीकानेर में था। चातुर्मास सम्पन्न होने पर मैं विहार कर रहा था। साथ में हजारों लोगों की भीड़ थी। जैसे ही हम बीकानेर की "लाल कोटड़ी" से बाहर मुख्य सड़क पर आए, सामने से एक दूसरे सम्प्रदाय के आचार्य का जुलूस आ रहा था। रांगड़ी चौक में हम आमने-सामने थे। कौन किसके लिए रास्ता छोड़े? ऐसी फूसफुसाहट शुरु हो गई।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सामने का वातावरण आवेश और उत्तेजना से भरा हुआ था। उस पक्ष से रास्ता छोड़ने की कल्पना ही नहीं की जा सकती थी।

इधर हमारे पक्ष के लोगों में भी उत्तेजना बढ़ने लगी। उनके होंठो से फिसलते हुए कुछ स्वर मेरे कानों तक पहुंचे—"हम रास्ता क्यों छोड़े ? क्या हम कमजोर हैं ?" ईश्वरचन्दजी चोपड़ा, जो बहुत प्रभावशाली व्यक्ति थे, नहीं चाहते थे कि हम रास्ता छोड़ें। मैंने सारी स्थिति का आकलन किया और एक निष्कर्ष पर पहुंच गया। लोग आपस में बतिया रहे थे। और मैं रांगड़ी चौक की ओर मुड़ गया। चाहे-अनचाहे सब लोग मेरे पीछे-पीछे आ गए। एक दुर्घटना होते-होते बच गई।

महाराजा गंगासिंहजी के पास यह संवाद पहुंचा। उन्होंने स्थिति की जानकारी पाकर उस पर टिप्पणी करते हुए कहा—"आचार्य तुलसी, अवस्था में छोटे हैं, पर उन्होंने काम बहुत बड़ा किया है। ऐसा करके उन्होंने बीकानेर की शान रख ली। यदि वे ऐसा नहीं करते तो न जाने कितने लोग कुचल जाते, मर जाते और एक भारी हंगामा हो जाता।" मैं अनुभव करता हूं कि पूज्य कालूगणी के बीकानेर चातुर्मास की सहिष्णुता ने ही मुझे ऐसा सजीव प्रशिक्षण दिया। उसके कारण मैं सहिष्णुता के प्रभाव को आंक सका और अपने जीवन में उसका अनेक बार प्रयोग कर सका।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

विरोध को विनोद समझना

मैंने एक बार लिखा—"जो हमारा हो विरोध, हम उसे समझें विनोद।" विरोध को विनोद समझना साम्ययोग है। इसकी साधना अहिंसा की विशिष्ट साधना है। इसका सक्रिय प्रशिक्षण मुझे मालवा की यात्रा में मिला। पूज्य कालूगणी जावरा और रतलाम—इन क्षेत्रों की यात्रा पर थे। वहां पर जैन सम्प्रदाय के व्यक्तियों ने तेरापंथ के अहिंसा विषयक सिद्धान्त की कटु आलोचना ही नहीं की, उसके विरोध में सड़कों और दीवारों पर इतने पैम्फ्लेट चिपकाए कि नगर का वातावरण आन्दोलित हो उठा।

पूज्य कालूगणी ने जनता को समझाने का प्रयत्न किया, सिद्धान्तों का स्पष्टीकरण किया। किन्तु आक्षेप के प्रति आक्षेप और निन्दात्मक पैम्पलेट के प्रकाशन का कोई प्रयत्न नहीं किया। सारे विरोध को बड़ी शान्ति के साथ झेला। रतलाम के एक पंडित ने कुछ दिनों बाद पूज्य कालूगणी से कहा—"मैं पूरे घटनाचक्र को तटस्थ भाव से देख रहा था। आपने विरोध का उत्तर विरोध से नहीं, शान्ति से दिया इसलिये

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

विरोध केवल एकपक्षीय रहा। आपने विरोध को भी विनोद समझ कर टाल दिया। अहिंसा का विकास होने पर ही यह स्थिति संभव है। मैंने इसका गहराई से अनुभव किया है।"

कालूगणी ने पंडितजी की बात सुनकर कहा—"पंडितजी ! जिस व्यक्ति की पाचन-शक्ति ठीक नहीं होती, वह वमन को देखकर वमन करने लगता है। हमने अपनी पाचन-शक्ति को मजबूत बनाया है। इसलिए ऐसा नहीं होता।" इसी बोधपाठ का परिणाम है कि मैंने अपने छोटे से जीवन में अनेक बार विरोध को विनोद मानकर शान्ति से झेला है।

अहिंसा का सुरक्षाकवच—सहिष्णुता

अहिंसा का सुरक्षाकवच है सहिष्णुता। उसके बिना अहिंसा का विकास संभव नहीं है। पुज्य कालूगणी का जीवन सहिष्णुता का मूर्तरूप रहा है। जीवन की सान्ध्य वेला में उनके बाएं हाथ की तर्जनी अंगुली में एक जहरीला फोड़ा हो गया। उसकी पीड़ा असह्य थी, फिर भी पदयात्रा चलती रही। उन्होंने शल्यचिकित्सा के लिए डॉक्टर द्वारा लाए गये औजारों का प्रयोग नहीं किया। वे भेद-विज्ञान की साधना में लीन रहे। लगभग दो-ढाई महीने तक विशेष रूप से शारीरिक कष्ट रहा। उस समय उनकी जो सहिष्णुता और क्षमता रही, वह अलौकिक थी।

अहिंसक व्यक्ति के लिए ऐहिक मूर्च्छा से मुक्त होना बहुत आवश्यक है। वह अनासक्ति या अमूर्च्छा ही सहिष्णुता और क्षमता को जन्म देती है। उसके बिना सहिष्णु होना संभव नहीं है। पूज्य कालूगणी के अनेक व्यवहारों और संस्कारों ने मुझे जाने-अनजाने प्रभावित किया है। इससे मेरे मन की धरती पर अहिंसा के बीज प्रस्फुटित होते चले गए। मैंने समय-समय पर उनका प्रयोग भी किया है। यहां केवल एक प्रयोग का उल्लेख करना चाहता हूं।

मैंने "अग्निपरीक्षा" नामक पुस्तक लिखी। उसमें महासती सीता की अग्निपरीक्षा का वर्णन है। कुछ साम्प्रदायिक तत्त्वों ने साम्प्रदायिकता का विष फैलाया। उन्होंने जनता को भ्रमित करने का प्रयत्न किया। फलतः उस पुस्तक को लेकर एक बवण्डर-सा खड़ा हो गया। उसे शान्त करने के अनेक प्रयत्न किए गए। पर विरोध की ज्वाला शान्त नहीं हुई। आखिर मध्यप्रदेश के उच्च न्यायालय द्वारा

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

निर्दोष घोषित की गई पुस्तक को वापस लेकर बवण्डर को शान्त किया गया। सर्वोदयी नेता जयप्रकाश नारायण ने इसे अहिंसा का एक बड़ा प्रयोग बताया।

'अग्निपरीक्षा' पुस्तक को वापस लेने का प्रसंग बहुचर्चित रहा। उस समय एक साहित्यकार ने कहा—"आचार्यजी! आपने इस पुस्तक को वापस लेकर साहित्य जगत् के प्रति न्याय नहीं किया।" मैंने उनको समझाते हुए कहा—"मैं पहले अहिंसा का साधक सन्त हूं, बाद में साहित्यकार हूं। जहां अहिंसा का प्रश्न है, वहां हमारा आचरण और व्यवहार अलौकिक ही होना चाहिए—इस सिद्धान्त में मेरी गहरी आस्था है। मैं चाहता हूं यह आस्था व्यापक बने।"

द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में गणाधिपति श्री तुलसी का विशेष वक्तव्य।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अहिंसा के प्रशिक्षण की आधारभूमि

— आचार्य महाप्रज्ञ

क्या अहिंसा का प्रशिक्षण संभव है? यह प्रश्न अस्वाभाविक नहीं है, अप्रासंगिक भी नहीं है। अहिंसा परिणाम है, निष्पत्ति है। प्रवृत्ति का प्रशिक्षण हो सकता है, परिणाम का प्रशिक्षण नहीं हो सकता। यह तर्क हिंसा के लिए भी प्रस्तुत किया जा सकता है। इसमें सच्चाई है। हिंसा भी एक परिणाम है। प्रवृत्ति को मिटाया जा सकता है। उसका रूपान्तरण किया जा सकता है। परिणाम को न मिटाया जा सकता है और न ही उसका रूपान्तरण किया जा सकता है।

हिंसा : उद्‌भव स्रोत

मनुष्य में एक मौलिक मनोवृत्ति है, वह है, अधिकार की भावना, परिग्रह अथवा संग्रह की मनोवृत्ति। यह हिंसा का उद्‌भव स्रोत है। परिग्रह की मनोवृत्ति का रूपान्तरण हो जाना ही अहिंसा का उपादान है। अपरिग्रह की चेतना को जगाने के उपक्रम का नाम है, अहिंसा का प्रशिक्षण और अहिंसा के प्रशिक्षण का अर्थ है, अपरिग्रह की चेतना को जगाने का प्रयत्न।

परिग्रह और हिंसा

व्यक्तिगत स्वामित्व, सामूहिक स्वामित्व, राज्य का स्वामित्व, सहकारिता, केन्द्रित अर्थ व्यवस्था, विकेन्द्रित अर्थ व्यवस्था—इन शब्दों की मीमांसा किए बिना हम अहिंसा के प्रशिक्षण की बात सोच नहीं सकते। व्यक्तिगत स्वामित्व के प्रति बहुत आकर्षण है इसीलिए आर्थिक विकास के क्षेत्र में वह सर्वोत्तम प्रमाणित हुआ है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सामूहिक स्वामित्व और राज्य का स्वामित्व—दोनों आर्थिक विकास की दौड़ में पिछड़ गए हैं। यह इस दशक में घटित यूरोप और एशिया की घटनाओं से प्रमाणित हुआ है। सहकारिता की स्थिति भी लगभग यही है। इनका कारण स्पष्ट है—व्यक्तिगत स्वामित्व में अधिकार की भावना प्रबल होती है। सामूहिक स्वामित्व, राज्यगत स्वामित्व और सहकारिता में वह दुर्बल बन जाती है। इसका निष्कर्ष यह है कि परिग्रह और हिंसा—दोनों में गठबंधन है। जहां अधिकार की भावना है वहां अर्थ-संग्रह के प्रति अधिक आकर्षण है। जहां अर्थ-संग्रह के प्रति अधिक आकर्षण है वहां हिंसा के प्रति अधिक आकर्षण है।

अहिंसा-प्रशिक्षण : प्रथम बिन्दु

अहिंसा का प्रशिक्षण कहां से प्रारम्भ करें? इस प्रश्न का उत्तर उक्त समस्या का सहज समाधान है। अहिंसा का प्रारम्भ बिन्दु है—अभय। "भय मत करो" इसे हजार बार पढ़ने वाला व्यक्ति भी भयमुक्त नहीं होगा यदि उसका शरीर के प्रति मोह है, धन और पदार्थ के प्रति मूर्च्छा है। भय का कारक तत्त्व भीतर रहे और बाहर से अभय का पाठ पढ़े तो लक्ष्य पूर्ण नहीं होता। भय के संवेग का परिष्कार कैसे हो? भय के उद्दीपन से कैसे बचा जाए? इन दोनों का सम्यक् बोध और प्रयोग ही अभय का प्रशिक्षण हो सकता है। इस अवस्था में ही अभय अहिंसा के प्रशिक्षण का प्रथम बिन्दु बन सकता है।

अहिंसा का बीज

अधिकार की भावना, संग्रह और भय—ये सब एक ही परिवार के सदस्य हैं। इनसे मुक्ति पाने की बात सहज संभव नहीं है। इनका परिष्कार करना संभव है। उस परिष्कार में ही छिपा रहता है, अहिंसा का बीज। परिष्कार के साधनों की खोज एक जटिल प्रश्न है। चूल्हे पर चढ़ा हुआ पानी गर्म हो जाता है। नीचे उतरा और फिर ठंडा हो जाता है। परिष्कार की ज्योति प्रज्वलित रहे, वह बुझे नहीं। यह कार्य सरल नहीं है, साथ-साथ विश्वास करना होगा, यह असंभव भी नहीं है।

पहला साधन-सूत्र

हिंसा उपजती है भावतंत्र में। फिर वह विचार में उतरती है और फिर आचरण

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

में। अहिंसा के प्रशिक्षण का पहला साधन-सूत्र है भाव-विशुद्धि। विधायक भाव हो, निषेधात्मक भाव न हो। इसके लिए शरीर और मन को प्रशिक्षित करना आवश्यक है।

शारीरिक प्रशिक्षण के सूत्र

शारीरिक प्रशिक्षण के सूत्र हैं—आसन और प्राणायाम। पद्मासन, शशांकासन, योगमुद्रा, वज्रासन, सर्वांगासन, मत्स्यासन, गोदोहिकासन आदि। आसन नाड़ीतंत्र और ग्रन्थितंत्र को प्रभावित करते हैं। इनके द्वारा हिंसा के शारीरिक उपादान क्षीण होते हैं। अनुलोम-विलोम, चन्द्रभेदी, नाड़ी-शोधन, उज्जाई और शीतली आदि प्राणायाम शरीर में उपस्थित हिंसा के बीजाणुओं का विरेचन करते हैं।

मानसिक प्रशिक्षण का सूत्र

मानसिक प्रशिक्षण का सूत्र है—ध्यान। कायोत्सर्ग, दीर्घश्वास प्रेक्षा, समवृत्तिश्वास प्रेक्षा आदि ध्यान के प्रयोग मानसिक एकाग्रता के विकास में सहयोगी बनते हैं। चंचलता जितनी कम उतनी ही हिंसा कम। चंचलता जितनी अधिक हिंसा उतनी ही अधिक।

भावात्मक प्रशिक्षण के सूत्र

शारीरिक और मानसिक प्रशिक्षण से अधिक आवश्यक है भावात्मक प्रशिक्षण। उसके साधन-सूत्र हैं—चैतन्य केन्द्र का ध्यान और आभामण्डलीय लेश्या ध्यान।

अनुप्रेक्षा के प्रयोग शारीरिक, मानसिक और भावात्मक—तीनों प्रशिक्षण पदों के लिए उपयोगी हैं।

आधारभूमि : प्रयोगभूमि

यह अहिंसा के प्रशिक्षण की व्यक्तिगत पद्धति है। वास्तव में अहिंसा का प्रशिक्षण व्यक्ति के स्तर पर ही होता है। समाज के स्तर पर उसका प्रयोग होता है। यह कहने में कोई कठिनाई नहीं होगी कि अहिंसा के प्रशिक्षण की आधारभूमि है, व्यक्ति और प्रयोगभूमि है, समाज। हिंसा के लिए भी यही कहा जा सकता है—हिंसा की आधारभूमि है, व्यक्ति और प्रयोगभूमि है, समाज। अहिंसक समाज रचना का महत्त्वपूर्ण

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

घटक है—व्यक्ति-रचना इसलिए अहिंसक व्यक्ति-रचना प्रशिक्षण का पहला चरण होगा।

पारिवारिक जीवन और अहिंसा

एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति के साथ संबंध और व्यवहार का तात्पर्य है, समाज। मानवीय संबंध और निश्छल व्यवहार का प्रशिक्षण सामाजिक स्तर पर अहिंसा का प्रशिक्षण है। उसकी पहली प्रयोगभूमि है, परिवार। हिंसा को, युद्ध और आतंकवाद तक सीमित करना हमें इष्ट नहीं है। युद्ध कभी कभी और किसी किसी भूभाग में होने वाली घटना है। पारिवारिक जीवन में हिंसा की घटनाएं प्रतिदिन या बहुत बार होती रहती हैं। वे मानसिक शांति में बाधा डालती हैं, व्यापक हिंसा की पृष्ठभूमि तैयार करती हैं। पारिवारिक जीवन में शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व का होना अहिंसा के प्रशिक्षण का महत्त्वपूर्ण कार्य होगा। असहिष्णुता, असंयम और महत्त्वाकांक्षा—ये पारिवारिक जीवन में अशांति का विष घोल देते हैं। सहिष्णुता और संयम का अभ्यास, महत्त्वाकांक्षा का परिसीमन—ये प्रयोग पारिवारिक जीवन में होने वाली हिंसा का वातावरण बदल देते हैं।

पारिवारिक अहिंसा : अनेकांत का प्रशिक्षण

पारिवारिक अहिंसा का एक महत्त्वपूर्ण घटक है, सामंजस्य। भिन्न विचारों, भिन्न रुचियों में सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है। इस कार्य में अनेकांत का प्रशिक्षण बहुत सहयोगी है। उसमें स्वतंत्रता मान्य है किन्तु सापेक्षता को छोड़कर स्वतंत्रता मान्य नहीं। सह-अस्तित्व मान्य है किंतु अन्याय की प्रतिकारात्मक शक्ति को छोड़कर सह-अस्तित्व मान्य नहीं। समानता मान्य है किन्तु क्षमतात्मक असमानता छोड़कर समानता मान्य नहीं। शांति का आधार-स्तंभ इतना कमजोर न हो कि भिन्नता के एक झोंके से चरमरा जाए। अनेकांत के प्रशिक्षण में भिन्नता अमान्य नहीं है। शर्त इतनी है कि उसका एक छोर अभिन्नता होनी चाहिए। अभिन्नता और भिन्नता के संगम की चेतना को जगाना अहिंसक समाज-रचना की दिशा में एक नया कदम होगा।

समाज में हिंसा के आधार

सामाजिक जीवन में हिंसा के मजबूत आधार बने हुए हैं। उन्हें बहुत लम्बे

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

समय से मान्यता मिली हुई है। जातिवाद, रंगभेद, गरीबी, क्षेत्रवाद—इन पूर्वाग्रहों से ग्रस्त समाज समय-समय पर हिंसा की आग में ईंधन डालता रहा है।

जातिवाद और रंगभेद के सर्पदंश से छुटकारा पाने के लिए मानवीय एकता का प्रशिक्षण अत्यन्त अपेक्षित है।

गरीबी की समस्या कुछ जटिल है। जटिलता का एक पहलू है—उपभोग्य सामग्री कम है, उपभोक्ता अधिक हैं। संविभाग या बांट-बांट कर खाने की मनोवृत्ति का अभाव है। व्यक्तिगत सुविधा और संग्रह की भावना प्रबल है। इस समस्या को सुलझाने के लिए संविभाग का प्रशिक्षण बहुत आवश्यक है।

प्रश्न विश्व की मौलिक एकता का

राष्ट्र की भौगोलिक इकाई की उपयोगिता को मान्य करते हुए भी विश्व की मौलिक एकता का मूल्य कम नहीं होना चाहिए। अहं और महत्त्वाकांक्षा का टकराव विश्व को एक सूत्र में बंधने से रोकता है। मनुष्य की चेतना इतनी विकसित भी नहीं है कि वह सबके साथ न्याय और संतुलित व्यवहार कर सके। यह स्थिति भी भौगोलिक और प्रादेशिक सीमाओं के अस्तित्व को बनाए रखने में निमित्त बन रही है। अहिंसक समाज की रचना के लिए भौगोलिक सीमाओं की समाप्ति अनिवार्य शर्त नहीं है। उसकी अनिवार्य शर्त यह है कि भौगोलिक सीमाओं के अस्तित्व के साथ मानवीय एकता का धागा टूटे नहीं।

अहिंसा का प्रशिक्षण : आधारभूत तत्त्व

अहिंसा के प्रशिक्षण का आधारभूत तत्त्व है हृदय-परिवर्तन अथवा मस्तिष्कीय प्रशिक्षण। हृदय-परिवर्तन के लिए निम्ननिर्दिष्ट सिद्धान्त सूत्रों का प्रशिक्षण आवश्यक होगा—

हिंसा के हेतु	परिणाम
१. लोभ	अधिकार की मनोवृत्ति।
२. भय	शस्त्र-निर्माण और शस्त्र का प्रयोग।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

३. वैर-विरोध	प्रतिशोध की मनोवृत्ति।
४. क्रोध	कलहपूर्ण सामुदायिक जीवन।
५. अहंकार	घृणा, जातिभेद के कारण छुआछूत, रंगभेदजनित विद्वेष।
६. क्रूरता	शोषण, हत्या।
७. असहिष्णुता	सांप्रदायिक झगड़ा।
८. निरपेक्ष चिन्तन	आग्रहपूर्ण मनोवृत्ति, दूसरों के विचारों को मूल्य न देने की मनोवृत्ति।
९. निरपेक्ष व्यवहार	सामुदायिक जीवन में पारस्परिक असहयोग की मनोवृत्ति।

ये संवेग व्यक्ति को हिंसक बनाते हैं। हृदय-परिवर्तन का अर्थ है—इन संवेगों का परिष्कार करना, इनके स्थान पर नए संस्कार-बीजों का वपन करना।

मस्तिष्कीय प्रशिक्षण के सूत्र

१. लोभ का अनुदय	शरीर और पदार्थ के प्रति अमूर्च्छा भाव का प्रशिक्षण।
२. भय का अनुदय	अभय का प्रशिक्षण। शस्त्र निर्माण और शस्त्र का व्यवसाय न करने की संकल्प शक्ति का प्रशिक्षण।
३. वैर-विरोध का अनुदय	मैत्री का प्रशिक्षण। प्रतिशोधात्मक मनोवृत्ति से बचने का प्रशिक्षण।
४. क्रोध का अनुदय	क्षमा का प्रशिक्षण।
५. अहंकार का अनुदय	विनम्रता का प्रशिक्षण, अहिंसक प्रतिरोध का प्रशिक्षण, अन्याय के प्रति असहयोग का प्रशिक्षण।
६. क्रूरता का अनुदय	करुणा का प्रशिक्षण।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

७.	असहिष्णुता का अनुदय	साम्प्रदायिक सद्भाव का प्रशिक्षण, भिन्न विचारों को सहने का प्रशिक्षण।
८.	निरपेक्ष चिन्तन का अभाव	सापेक्ष चिन्तन का प्रशिक्षण।
९.	निरपेक्ष व्यवहार का अभाव	सापेक्ष व्यवहार का प्रशिक्षण।
१०.	निषेधात्मक भाव का अभाव	विधायक भाव का प्रशिक्षण।

अनावश्यक हिंसा का वर्जन

अहिंसा के प्रशिक्षण का एक सूत्र होगा—अनावश्यक हिंसा के वर्जन की चेतना को जगाना। पानी का अपव्यय, खनिज पदार्थों का अतिरिक्त दोहन, निरपराध प्राणियों और मनुष्यों की हत्या, अनावश्यक हिंसा—इस हिंसा ने व्यक्ति को क्रूर बनाया है। इससे प्रकृति का संतुलन बिगड़ा है।

शारीरिक स्वास्थ्य और अहिंसा

शारीरिक स्वास्थ्य और अहिंसा में भी आंतरिक संबंध है। शारीरिक स्वास्थ्य के अभाव में हिंसा का भाव उपजता है। आत्महत्या का एक हेतु है रक्त में शर्करा की कमी होना। यकृत् (लीवर) और तिल्ली (स्प्लीन) की विकृति हिंसा के भाव को जन्म देती है। हिंसा और अहिंसा से संबंध रखने वाले आहार-शास्त्र और स्वास्थ्य-शास्त्र का प्रशिक्षण अहिंसा के प्रशिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण अंग है।

आर्थिक स्वास्थ्य और अहिंसा

आर्थिक स्वास्थ्य के लिए इन सूत्रों का प्रशिक्षण आवश्यक है—

१. विसर्जन की मनोवृत्ति का प्रशिक्षण।

२. असंग्रह का प्रशिक्षण।

३. विकेन्द्रित अर्थ व्यवस्था का प्रशिक्षण।

४. अर्थशास्त्र और विश्व शांति।

५. अर्थशास्त्र और स्वस्थ समाज।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

६. अर्थार्जन में प्रामाणिकता का प्रशिक्षण।

७. संविभाग की मनोवृत्ति का प्रशिक्षण।

८. उपभोग की असीम लालसा के नियमन एवं उपभोग के सीमाकरण का प्रशिक्षण।

अहिंसक समाज अथवा स्वस्थ समाज की रचना के लिए शारीरिक, मानसिक, भावात्मक और आर्थिक स्वास्थ्य—सभी का योग जरूरी है। अहिंसा का प्रशिक्षण इन सब पर आधारित है।

अहिंसा प्रशिक्षण : आधार और प्रयोगभूमि

अहिंसा प्रशिक्षण की पद्धति का मौलिक आधार है अहिंसानिष्ठ व्यक्तित्व का निर्माण। उसकी प्रयोग-भूमियां चार है—

१. पारिवारिक जीवन

२. सामाजिक जीवन

३. राष्ट्रीय जीवन

४. अन्तर्राष्ट्रीय जीवन

प्रत्येक मनुष्य मानसिक और क्षेत्रीय सीमाओं में विभक्त है। अहिंसा के लिए विभक्त या अखण्ड व्यक्तित्व की अपेक्षा है। इस अपेक्षा की पूर्ति के लिए प्रशिक्षण को बहुआयामी करना होगा। व्यक्ति को छोड़कर केवल अहिंसक समाज रचना की बात सोचना एक बहुत बड़ी भ्रान्ति है। अहिंसक समाज की रचना की बात को छोड़कर केवल व्यक्ति को अहिंसक बनाने की बात सोचना भी भ्रम से परे नहीं है। व्यक्ति का निर्माण समाज-सापेक्ष और समाज का निर्माण व्यक्ति-सापेक्ष होता है। इन दोनों सच्चाइयों को ध्यान में रखकर ही अहिंसा के प्रशिक्षण की बात को आगे बढ़ाया जा सकता है।

द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में आचार्य श्री महाप्रज्ञ का विशेष वक्तव्य।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अनेकान्त और अहिंसा

— आचार्य महाप्रज्ञ

हमारा जगत् द्वन्द्वात्मक अथवा भेदाभेदात्मक है। अभेद छिपा रहता है और भेद सामने आता है। मनुष्य मनुष्य में अनेक प्रकार के भेद हैं—

१. मान्यता अथवा अवधारणा का भेद।
२. विचार का भेद।
३. रुचि का भेद।
४. स्वभाव का भेद।
५. संवेग का भेद।

मान्यता-भेद

मान्यता-भेद के आधार पर अनेक सम्प्रदाय बने हैं, उनके अनुयायियों की संख्या का विस्तार हुआ है। सांप्रदायिक भेद होना वैचारिक स्वतन्त्रता का लक्षण है। मनुष्य यांत्रिक नहीं है। वह चिन्तनशील प्राणी है, अपने ढंग से सोचता है, सिद्धान्त का निर्धारण करता है और स्वीकार करता है।

मनुष्य चिन्तनशील होने के साथ-साथ संवेगयुक्त भी है। यदि वह केवल चिंतनशील होता तो भेद भेद ही रहता। वह विरोध का रूप लेकर साम्प्रदायिक विद्वेष, कलह और झगड़े की स्थिति का निर्माण नहीं करता। सांप्रदायिक उत्तेजना का मूल कारण सिद्धान्त-भेद नहीं है, उसका कारण है संवेगजनित आग्रह।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

विचार-भेद

प्रत्येक मनुष्य का अस्तित्व स्वतन्त्र है इसलिए चिन्तन का भेद होना स्वाभाविक है। यदि वह यन्त्र द्वारा संचालित होता तो एक ही प्रकार से सोचता। वह वैसा नहीं है। सबकी अपनी-अपनी चेतना है, इसलिए अपना-अपना चिन्तन हो, यह अस्वाभाविक नहीं है। यह विचार का भेद संवेग से प्रभावित होकर संघर्ष की स्थिति का निर्माण करता है।

रुचि-भेद

इन्द्रिय संवेदना सब मनुष्यों की एक जैसी नहीं होती। एक ही वस्तु किसी मनुष्य के लिए सुख के संवेदन का हेतु बनती है और किसी के लिए दुःख के संवेदन का। संवेदन की भिन्नता में कोई संघर्ष नहीं है। इसमें संघर्ष की चिनगारी डालने वाला संवेग ही है।

स्वभाव-भेद

जितने मनुष्य उतने स्वभाव, नाना प्रकार की आदतें। स्वभाव भेद के लिए उत्तरदायी है मनुष्य के आन्तरिक व्यक्तित्व की संरचना। स्वभाव-भेद के कारण जो टकराव होता है, उसके लिए उत्तरदायी है संवेग।

संवेग-भेद

मनुष्य मनुष्य में होने वाले भेद का प्रमुख कारण है संवेग किन्तु सब मनुष्यों में संवेग समान नहीं होता। उसका तारतम्य ही भेद का सृजन करता है। संवेग की तरतमता के मुख्य प्रकार तीन और अवान्तर प्रकार नौ हैं—

१. मृदु—अल्प मात्रा वाला संवेग।

२. मध्य—मध्य मात्रा वाला संवेग।

३. तीव्र—अधिक मात्रा वाला संवेग।

मृदु के तीन प्रकार हैं—

१. मृदु।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

२. मध्य मृदु।

३. अधिमात्र मृदु।

मध्य के तीन प्रकार हैं—

१. मध्य।

२. मध्य मध्य।

३. अधिमात्र मध्य।

तीव्र के तीन प्रकार हैं—

१. तीव्र।

२. मध्य तीव्र।

३. अधिमात्र तीव्र।

मृदु संवेग वाला व्यक्ति शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व में विश्वास करता है। वह तोड़-फोड़, कलह आदि प्रवृत्तियों में भाग नहीं लेता और आत्महत्या तथा परहत्या की कल्पना भी नहीं करता।

मध्य संवेग वाला व्यक्ति कलह, उपद्रव, तोड़-फोड़ आदि में प्रवृत्त होता है।

मध्य-मध्य संवेग वाला व्यक्ति वर्ण और जाति के आधार पर घृणा करता है, छुआछूत में विश्वास करता है, ऊंच-नीच की भेदरेखा को विस्तार देता है।

अधिमात्र मध्य संवेग वाला व्यक्ति साम्प्रदायिक उत्तेजना फैलाता है, अभिनिवेशवश सांप्रदायिक संघर्ष की स्थिति का निर्माण करता है।

तीव्र संवेग वाला व्यक्ति आत्महत्या, परहत्या जैसे हिंसात्मक कार्यों में प्रवृत्त होता है।

मध्यतीव्र संवेग वाला व्यक्ति जातीयता और सांप्रदायिकता के आधार पर हिंसा भड़का देता है।

अधिमात्र तीव्र संवेग वाला व्यक्ति जनता को युद्धोन्माद की ओर ले जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

हिंसा और एकांगी दृष्टिकोण

संवेग जितना तीव्र होता है, उतना ही प्रबल हो जाता है मिथ्या अभिनिवेश, एकांगी आग्रह। मिथ्या अभिनिवेश और एकांगी आग्रह हिंसा के मुख्य बिन्दु हैं। हम हिंसा को केवल शस्त्रीकरण और युद्ध तक सीमित करना नहीं चाहते। पारिवारिक कलह, मानवीय संबन्धों में कटुता, जातीय संघर्ष, सांप्रदायिक संघर्ष, क्षेत्रीय संघर्ष, सहानवस्थान—या *तुम* या *हम* की मनोवृत्ति—ये सब हिंसा के प्रारम्भिक रूप हैं और ये ही मानव-जाति को शस्त्रीकरण और युद्ध की दिशा में ले जाते हैं। निःशस्त्रीकरण और युद्धवर्जना के सिद्धांत बहुत अच्छे हैं किन्तु सबसे पहले हिंसा के प्रारम्भ बिन्दुओं पर ध्यान केंद्रित करना जरूरी है। मिथ्या अभिनिवेश समाज को क्रूरता की रेखा तक ले जाता है, हिंसा के द्वार खुल जाते हैं। अभिनिवेश को कम करने के लिए अनेकांत एक महत्त्वपूर्ण विकल्प है।

अनेकांत के आधार-सूत्र

अनेकांत अभिनिवेश और आग्रह से मुक्त होने का प्रयोग है। उसके मूलभूत सिद्धांत पांच हैं:—

१. सप्रतिपक्ष

२. सह-अस्तित्व

३. स्वतंत्रता

४. सापेक्षता

५. समन्वय

सप्रतिपक्ष

दार्शनिक पक्ष—इस विश्व में वही अस्तित्व है, जिसका प्रतिपक्ष है।

अस्तित्व सप्रतिपक्ष है—*यत् सत् तत् सप्रतिपक्षं*। कोई भी अस्तित्व ऐसा नहीं, जिसका प्रतिपक्ष न हो।

व्यावहारिक पक्ष—प्रतिपक्ष अपने अस्तित्व का अनिवार्य अंग है, पूरक है, इसलिए उसे शत्रु मत मानो। उसके साथ मित्र का सा व्यवहार करो। किन्तु राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक प्रणालियों में परस्पर आदर का व्यवहार नहीं है, शत्रु जैसा

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

व्यवहार है। लोकसभा और विधानसभा में विपक्ष का महत्त्वपूर्ण स्थान है, फिर भी उसके प्रति आदर का दृष्टिकोण कम रहता है, विरोधी जैसी व्यवहार अधिक होता है।

साधना-पक्ष—प्रतिपक्ष का सिद्धांत सार्वभौम नियम है। फिर भी मनुष्य अपनी संवेगात्मक प्रकृति और विरोधी हितों के कारण प्रतिपक्ष को अपना शत्रु मान लेता है। इस संवेगात्मक दृष्टिकोण को बदलने के लिए सामंजस्य की साधना बहुत सहयोगी बनती है। प्रतिपक्ष का आदर करना अस्तित्व की सुरक्षा का महत्त्वपूर्ण पहलू है।

विरोधात्मक दृष्टिकोण को बदलने के लिए सामंजस्य की अनुप्रेक्षा की जाती है।

सह-अस्तित्व

दार्शनिक-पक्ष :—प्रत्येक वस्तु में अनन्त विरोधी युगल हैं। वे सब एक साथ रहते हैं।

व्यवहार-पक्ष :—दो विरोधी विचार वाले एक साथ रह सकते हैं। "तुम भी रहो और मैं भी रहूं", यही सूत्र हमारे जगत् का सौन्दर्य है। इसलिए विरोधी को समाप्त करने की बात मत सोचो। सीमा का निर्धारण करो। तुम अपनी सीमा में रहो, वह अपनी सीमा में रहे। सीमा का अतिक्रमण मत करो।

साधना-पक्ष :—विरोध हमारी मानसिक कल्पना है। सह-अस्तित्व में वही बाधक है। यदि हम भय और घृणा के संवेग का परिष्कार करें, तो सह-अस्तित्व की बाधा समाप्त हो सकती है। संवेग-परिष्कार के लिए सह-अस्तित्व की अनुप्रेक्षा उपयोगी है।

स्वतन्त्रता

दार्शनिक-पक्ष :—प्रत्येक पदार्थ का अस्तित्व स्वतंत्र है। कोई किसी के अस्तित्व में हस्तक्षेप नहीं करता, इसलिए सब पदार्थ अपने-अपने मौलिक गुणों के कारण अपनी विशिष्टता बनाए हुए हैं।

व्यवहार-पक्ष :—मनुष्य की स्वतन्त्रता अथवा व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

मूल्यांकन किए बिना समाज स्वस्थ नहीं रहता। सामाजिकता के महत्त्व को स्वीकार करते हुए भी वैयक्तिक स्वतन्त्रता का मूल्य कम नहीं आंकना चाहिए।

साधना-पक्ष :—एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की स्वतन्त्रता में बाधक न बने। ऐसा वही व्यक्ति कर सकता है, जो अपने विचार को सर्वोपरि सत्य नहीं मानता। अपने विचार को ही सब कुछ मानने वाला दूसरे की स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप किए बिना नहीं रहता। इस हस्तक्षेपी मनोवृत्ति को बदलने के लिए स्वतन्त्रता की अनुप्रेक्षा बहुत मूल्यवान है।

सापेक्षता

दार्शनिक-पक्ष :—हमारा अस्तित्व स्वतन्त्र और निरपेक्ष है किन्तु हमारा व्यक्तित्व सापेक्ष है। व्यक्तित्व की सीमा में स्वतन्त्रता भी सापेक्ष है। इसलिए कोई भी व्यक्ति पूर्ण स्वतन्त्र नहीं है और वह पूर्ण स्वतन्त्र नहीं है इसलिए सापेक्ष है। विकासवाद का सूत्र है—जीवन का मूल आधार है *संघर्ष*। अनेकांत का सूत्र है—जीवन का मूल आधार है *परस्परावलम्बन*। एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के सहारे पर टिका हुआ है।

व्यवहार-पक्ष :—एकांकी दृष्टिकोण वाले विचारक व्यक्ति और समाज को खंडित कर देखते हैं। कोई विचारक समाज को ही सब कुछ मानता है, तो कोई विचारक व्यक्ति को ही सब कुछ मानता है। अनेकांत का दृष्टिकोण सर्वांगीण है। उसके अनुसार व्यक्ति और समाज—दोनों सापेक्ष हैं। यदि समाज ही सब कुछ है तो व्यक्तिगत स्वतन्त्रता अर्थहीन हो जाती है और यदि व्यक्ति ही सब कुछ है, तो सापेक्षता का कोई अर्थ नहीं होता। स्वतन्त्रता की सीमा है सापेक्षता और सापेक्षता की प्रयोगभूमि है व्यक्ति एवं समाज के बीच होने वाला सम्बन्ध-सूत्र।

मानवीय सम्बन्धों में जो कटुता दिखाई दे रही है, उसका हेतु निरपेक्ष दृष्टिकोण है। संकीर्ण राष्ट्रवाद और युद्ध भी निरपेक्ष दृष्टिकोण के परिणाम हैं। सापेक्षता के आधार पर सम्बन्ध-विज्ञान को व्यापक आयाम दिया जा सकता है। मनुष्य, पदार्थ, विचार, वृत्ति और अपने शरीर के साथ सम्बन्ध का विवेक करना अहिंसा के विकास के लिए बहुत आवश्यक है। मनुष्यों के प्रति क्रूरतापूर्ण, पदार्थ के प्रति आसक्तिपूर्ण, विचारों के साथ आग्रहपूर्ण, वृत्तियों के साथ असंयत, शरीर के साथ मूर्च्छापूर्ण सम्बन्ध है, तो हिंसा अवश्यंभावी है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

साधना-पक्ष :—एकांगी अथवा निरपेक्ष दृष्टिकोण को बदलने के लिए अभ्यास आवश्यक है। परिवर्तन केवल जानने मात्र से नहीं होता। उसके लिए दीर्घकालीन अभ्यास अपेक्षित है। सर्वांगीण और सापेक्ष दृष्टिकोण को विकसित करने के लिए सापेक्षता की अनुप्रेक्षा अपेक्षित है।

समन्वय

दार्शनिक-पक्ष :—कोई भी विचार समग्र सत्य नहीं होता। वह सत्यांश होता है। जैसे अपने विचार को सत्य मानते हो वैसे ही दूसरे के विचार में भी सत्य की खोज करो। अपने विचार को सत्य ही मानना और दूसरे के विचारों को असत्य ही मानना एकांगी आग्रह है। यह एकांगी आग्रह मनुष्य को असत्य की ओर ले जाता है। सत्य की खोज का मार्ग है अनाग्रह। अनाग्रही मनुष्य दो भिन्न विचारों में समन्वय साध सकता है।

व्यवहार-पक्ष :—आग्रही मनोवृत्ति सांप्रदायिक उत्तेजना के लिए उत्तरदायी है। एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय द्वारा सम्मत सत्यांश को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है। आचार्य विनोबा ने लिखा :—"मैं कबूल करता हूं कि मुझ पर गीता का गहरा असर है। उस गीता को छोड़कर महावीर से बढ़कर किसी का असर मेरे चित्त पर नहीं है। उसका कारण यह है कि महावीर ने जो आज्ञा दी है, वह बाबा को पूर्ण मान्य है। आज्ञा यह है कि सत्यग्राही बनो। आज जहां-जहां जो उठा सो सत्याग्रही होता है। बाबा को भी व्यक्तिगत सत्याग्रही के नाते गांधीजी ने पेश किया था लेकिन बाबा जानता था—वह कौन है? वह सत्याग्रही नहीं, सत्यग्राही है। हर मानव के पास सत्य अंश होता है इसलिए मानव-जन्म सार्थक होता है। तो सब धर्मों में, सब पन्थों में, सब मानवों में सत्य का जो अंश है, उसको ग्रहण करना चाहिए। हमको सत्यग्राही बनना चाहिए, यह जो शिक्षा है महावीर की, बाबा पर गीता के बाद उसी का असर है।"

साधना-पक्ष :—रैप्टेलियन मस्तिष्क से प्रभावित व्यक्ति सांप्रदायिक और जातीय घृणा फैलाने में तत्पर रहता है। साधना के द्वारा उसके प्रभाव को कम किया जा सकता है। समन्वय की चेतना के विकास के लिए समन्वय की अनुप्रेक्षा बहुत उपयोगी है।

द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में आचार्य श्री महाप्रज्ञ का विशेष वक्तव्य।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट

"शान्ति व अहिंसक-उपक्रम पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन" के समापन सत्र में सर्वसम्मत अनुमोदित

लाडनूं घोषणा-पत्र

(शान्तिदूत अणुव्रत अनुशास्ता जैन आचार्य श्री तुलसी गत चार दशकों से जातीय एवं धार्मिक उन्माद तथा हिंसा एवं आणविक युद्ध के बढ़ते हुए खतरों से मानव जाति को मुक्त कराने के लिये विश्व की अहिंसक शक्तियों को संगठित करने का प्रयास कर रहे हैं। लाडनूं सम्मेलन उसी दिशा में एक रचनात्मक कदम था। अहिंसक-उपक्रमों के द्वारा पृथ्वी से हिंसा के प्रभाव को समाप्त करने की दृष्टि से अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति संगठनों के प्रतिनिधियों ने इस अवसर पर एक संयुक्त कार्य-योजना स्वीकार की तथा जिसको उन्होंने "लाडनूं घोषणा-पत्र" का नाम दिया। प्रतिनिधियों ने वैयक्तिक स्तर पर क्रियान्वयन हेतु कुछ अनुशंषाएं प्रस्तुत की उनमें अणुव्रत आचार संहिता को प्रमुखता के साथ स्वीकार किया गया।)

हम घोषणा करते हैं कि . . .

हम, विश्व नागरिक, जो दिनांक ५ से ७ दिसम्बर, १९८८ को "शान्ति एवं अहिंसक-उपक्रम" पर आयोजित ऐतिहासिक सम्मेलन में भाग लेने के लिए लाडनूं (भारत) स्थित जैन विश्व भारती प्रांगण में एकत्रित हुए हैं, यह मानते हैं कि अहिंसक-उपक्रम द्वारा शान्ति स्थापित करना हम सबका समान लक्ष्य है। हम यह अनुभव करते है कि कोई भी कार्य-योजना बिना दिशा सुनिश्चित किए खतरे से खाली नहीं होती किन्तु जब एक बार दिशा निर्धारित हो जाती है तो उस ओर साहसिक एवं प्रभावी कदम बढ़ाना सम्भव हो जाता है। इसी भावना को ध्यान में रखते हुए हम निम्नलिखित अनुशंषाएं प्रस्तावित करते हैं तथा यह घोषणा करते हैं कि मानव समुदाय द्वारा इनका पालन करने पर शान्ति एवं अहिंसक विश्व के अभ्युदय का मार्ग प्रशस्त होगा:

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

आदान-प्रदान।

(८) निःशस्त्रीकरण के पक्ष में जन-मानस का निमार्ण।

(९) शान्ति और अहिंसा के कार्यों के प्रचार और प्रसार हेतु अन्तर्राष्ट्रीय प्रसार केन्द्रों की स्थापना।

(१०) सभी प्राणियों की समेकता और उनके अधिकारों पर बल देने तथा पशु-नागरिक अधिकारों से सम्बद्ध ऐसे सिद्धान्तों और कानूनों की रचना की जाय, जिनसे अहिंसावादी विश्व में समस्त प्राणियों के मध्य समता-संतुलन स्थापित किया जा सके।

(११) सभी संगठनों के स्तर पर पशुओं के प्रति क्रूरता के कार्यों पर रोक तथा लोगों के मनों में, विशेषतः बच्चों में, शान्ति-स्थापना के प्रति रुचि और उत्साह का जागरण।

(१२) भविष्य में विश्व के उन क्षेत्रों में, जो हिंसा उत्पन्न करने वाली समस्याओं से ग्रसित हैं, शान्ति सम्मेलनों का आयोजन।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

१. संगठनात्मक

संगठनात्मक दृष्टि से निम्नांकित कार्य सम्पन्न हों :—

(१) समस्त शान्ति सभाओं, समुदायों में "शान्ति" शब्द का भरपूर प्रयोग।

(२) जन-सभाओं में चित्रों एवं प्रदर्शनियों के माध्यम से "शान्ति" की संकल्पना और इसके महत्व का प्रचार।

(३) कार्यशालाओं, मूल्यांकन और अनुवर्ती कार्यों का आयोजन।

(४) इस प्रकार के पहले से ही विद्यमान गैर-सरकारी संगठनों का और अधिक सुदृढ़ीकरण।

(५) शान्ति ब्रिगेड्स को अहिंसा का प्रशिक्षण देने हेतु प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना।

(६) विभिन्न शान्ति संगठनों एवं संस्थाओं के कार्य-कलापों का समन्वय एवं कार्य-तन्त्र का निर्माण।

(७) सक्रिय शान्ति कार्यकर्ताओं और संगठनों का व्यक्तिगत स्तर पर

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

२. शैक्षिक

"शान्ति की शिक्षा सभी को" इस दिशा में निम्नांकित कार्य पूरी तत्परता और निष्ठा से सम्पादित किये जाएं—

(१) शान्ति और अहिंसा के कार्यों में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करने की दिशा में अध्ययन, प्रशिक्षण और अन्वेषण को प्रोत्साहन।

(२) शान्ति-गवेषणा की दिशा में किये गये सामूहिक एवं व्यक्तिगत प्रयत्नों के इतिहास का अनुगमन तथा उन प्रयत्नों की कमियों और विशेषताओं का उचित विश्लेषण करते हुए शान्ति-स्थापना की नई व्यूह-रचना की तैयारी।

(३) कविता, ललित कला, संगीत, नृत्य, नाटक और सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आदान-प्रदान द्वारा शान्ति की शिक्षा को प्रोत्साहन।

(४) समाचार पत्रों के माध्यम से शान्तिनिष्ठ कार्यक्रमों और सूचनाओं का भरसक प्रचार-प्रसार।

(५) मानवाधिकार घोषणा-पत्र के अध्ययन और उसके क्रियान्वयन पर विशेष बल।

(६) बाल-अधिकार घोषणा-पत्र का भली प्रकार से अध्ययन एवं क्रियान्वयन।

(७) युद्ध के विरुद्ध बनाये गये न्यूरम्बर्ग-सिद्धान्तों का अध्ययन तथा विश्व शान्ति के सिद्धान्तों और अन्तर्राष्ट्रीय सामरिक विधि-विधान के परिप्रेक्ष्य में उनमें उपयुक्त संशोधन।

(८) विभिन्न राष्ट्रों के संविधानों का अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकालना कि मनुष्य के मौलिक अधिकारों के रक्षार्थ तथा मानवाधिकार घोषणा-पत्र के क्रियान्वयन की उनमें क्या व्यवस्था है तथा उसकी क्या कार्य-पद्धति है?

(९) पारिवारिक स्तर पर भी अहिंसा के प्रशिक्षण की घोषणा एवं व्यवस्था।

(१०) यह भी सीखना और सिखाना कि हम अपनी बात अन्य लोगों को सफलतापूर्वक कैसे समझा सकते हैं।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

(११) सकारात्मक संकल्प करने की कला बच्चों और युवा छात्र-छात्राओं को सिखाना।

(१२) शिक्षक-प्रशिक्षणार्थियों और युवा-छात्र-वर्ग के पाठ्यक्रमों में शान्ति की शिक्षा को उचित स्थान देना।

(१३) प्रत्येक सक्रिय प्रौढ़ शान्ति कार्यकर्ता के मानस में बसे प्रत्येक बच्चे से मिलना, उसको सम्मान देना और शिक्षित करना।

(१४) शान्ति और-अहिंसा पर ज्ञानवर्धक साहित्य उपलब्ध कराना।

(१५) अहिंसा की संकल्पना के ढांचे के अन्दर-अन्दर इतिहास के अध्यापन की उचित व्यवस्था।

(१६) धार्मिक तनावों और युद्धों को टालने तथा शान्ति और सुख उपलब्ध कराने की दिशा में विभिन्न धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन को प्रोत्साहन देना।

(१७) वर्तमान व्यवस्थाओं में व्याप्त धार्मिक पूर्वाग्रहों को दूर करना।

(१८) सार्वभौम शिक्षा पाठ्यक्रमों में शान्ति-शिक्षा को सम्मिलित करना।

(१९) पाठ्यक्रमों की ऐसी नई पद्धतियों की खोज करना, जिनसे वर्तमान में प्रचलित हिंसात्मक प्रशिक्षण पद्धतियों को प्रतिसन्तुलित किया जा सके।

(२०) इस प्रकार की सार्वभौम शान्ति-शिक्षा के स्वप्न को साकार करने हेतु अन्तर्सम्प्रदाय विद्यालय एवं महाविद्यालयों की स्थापना करना।

३. विश्वव्यापी उपक्रम

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर एवं उससे भी परे निम्नांकित उपक्रम किये जाएं

(१) अन्तर्राष्ट्रीय स्तर एवं उससे भी परे विश्व शान्ति प्रतिज्ञा अभियान का प्रारम्भ।

(२) शान्ति और अहिंसा की सत्ता प्रतिष्ठित करने हेतु गैर-सरकारी लोक-संगठनों, जैसे—एकीकृत लोक संगठन आदि की स्थापना।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

(३) संयुक्त राष्ट्र संघ एवं इसके अधीनस्थ विभागों में गैर-सरकारी संगठनों के प्रतिनिधि भेजना तथा प्रतिनियुक्त करना।

(४) शान्ति और अहिंसा की स्थापना हेतु प्रत्येक देश में जनसभाओं की स्थापना।

(५) राष्ट्रीय प्रतिरक्षा की संरचना में हिंसात्मक साधनों के स्थान पर अहिंसात्मक साधनों की स्थानापन्न कराना।

(६) समाचार पत्रों पुलिस, राजनीतिज्ञों एवं न्याय-व्यवस्था को कानून और व्यवस्था के सही सिद्धान्तों और उसके तत्सम्बन्धी दायित्वों का बोध कराना।

(७) प्रत्येक देश में शान्ति और अहिंसा का पृथक मन्त्रालय स्थापित करने हेतु अभिशंसा करना तथा उसके लिए राष्ट्र-सरकारों पर दबाव डालना।

(८) शान्ति और अहिंसा की सार्वभौम शिक्षा के प्रचार और प्रसार के लिए उपयुक्त प्रयास करना।

४. सामाजिक कार्य

सम्पूर्ण विश्व में शान्ति और अहिंसा का साम्राज्य स्थापित करने की दिशा में विभिन्न सामाजिक संगठनों की महती भूमिका को समझते हुए वे संगठन निम्नांकित कार्य सम्पादित करें :

(१) पूर्व से विद्यमान समाजसेवी संगठनों को इस बात के लिए प्रेरित करना कि वे अपने ही अविभाज्य अंग—व्यक्ति को उचित सम्मान दें और उसकी प्रतिष्ठा बढ़ायें।

(२) ऐसे समाजसेवी संगठन अपने सामान्य उद्देश्यों की पूर्ति, विशेषतः विश्व शान्ति स्थापना की दिशा में एक दूसरे को पूर्ण सहयोग प्रदान करें।

(३) मतभेद की दिशा में विभिन्न समाजसेवी संगठन एक दूसरे के विपरीत प्रस्तावों को एक व्यवस्था के रूप में स्वीकार करें और उसका उचित समाधान करें।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

(४) आणविक शस्त्रीकरण के इस युग में ऐसे समाजसेवी संगठनों को इस बात के लिए प्रेरित करना कि वे अपने देश में भी शस्त्रीकृत सैन्य प्रतिरक्षा संरचना के विरुद्ध अपना नैतिक विरोध और असहयोग प्रकट करें।

(५) सशस्त्र सैन्य प्रतिरक्षा के स्थान पर अहिंसक, सामाजिक एवं असैनिक प्रतिरक्षा व्यवस्था को प्रोत्साहन दें।

(६) शान्ति कार्य में सहायक असैनिक बल के रूप में बच्चों का उपयोग करें।

(७) समाचारपत्रों के माध्यम से वर्तमान में किये जा रहे हिंसा के प्रदर्शन का विरोध करें।

(८) हिंसा के कार्यों की सार्वजनिक अवज्ञा व निन्दा करने के लिए जन-समुदाय को यथेष्ठ प्राथमिक प्रशिक्षण दें। यह प्रशिक्षण सर्व-प्रथम वार्ताओं, वक्तव्यों और दृश्य माध्यमों, जैसे—पोस्टर्स और चलचित्रों आदि से दिया जा सकता है, और तत्पश्चात् शान्ति और अहिंसा के पावन प्रयोजन से समस्त सामाजिक स्तरों पर प्रतीक-प्रदर्शन के रूप में किया जा सकता है।

(९) युद्धक प्रोत्साहक खिलौनों के क्रय-विक्रय पर पूर्ण पाबन्दी लगवायें।

(१०) हिंसा से शिकार हुए लोगों के पुनर्वास की व्यवस्था करें तथा उनको समाज का अंग बनाएं।

(११) ऐसी जीवन-पद्धति का विकास करें, जिसमें स्वस्थ जीवन, शुद्ध और सात्विक शाकाहारी भोजन, उत्तम चरित्र की आदत डालना एवं शान्ति और न्याय के प्रति प्रेम और आस्था जागृत करना आदि सम्मिलित है।

५. वैयक्तिक कार्य

"शान्ति और अहिंसा" की सत्ता कायम करने में व्यक्तिगत प्रयासों को भी सर्वाधिक महत्व दिया जाय और इस ओर निम्नांकित कार्य करने का संकल्प लें

(१) जनमानस में सहिष्णुता एवं सह-अस्तित्व की भावना का जागरण।

(२) शान्ति और इसके अनुरूप हर व्यक्ति की अवधारणा एवं विचारों का आदर करना तथा इस दिशा में केवल सुझावों पर निर्भर न रह कर व्यक्तियों को इस प्रयोजन से किये जा रहे कार्यों में भागीदार बनाना।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

(३) व्यक्तियों के शान्ति-विषयक विचारों के प्रति सहिष्णुता और आदर प्रदर्शित करते हुए उनके विचारों एवं दृष्टिकोण में समय और परिस्थिति के अनुसार सुधारात्मक परिवर्तन लाना।

(४) समस्त व्यावहारिक स्तरों पर हिंसा को नकारना एवं अहिंसा को स्वीकारना।

(५) समस्त व्यक्तिगत स्तरों पर प्रतिरक्षा के अहिंसक तरीके अपनाना।

(६) व्यक्तिगत स्तर पर आवश्यकताओं और उनके पूर्ति-साधनों का परिसीमन करना।

(७) व्यक्तियों की वेश-भूषा में सादगी और वातावरण में स्वच्छता उत्पन्न करना।

(८) इस बात के लिए सतत् प्रयत्नशील रहना कि लोग अपने वार्तालाप के तौर-तरीकों में तथा आदतवश अश्लील या फूहड़ भाषा का प्रयोग न करें।

(९) व्यक्ति कला, दस्तकारी, संगीत आदि को अभिरुचि (हॉबी) के रूप में अपनायें तथा विश्व-स्तर पर अधिकाधिक संख्या में पत्र-मित्र बनायें और उनके साथ पत्र-व्यवहार में समय और साधनों का भरपूर उपयोग करें।

(१०) लोगों में इस प्रकार का रुझान पैदा किया जाये कि वे सम्पादकों एवं लोकनायकों को बारंबार पत्र लिखकर हिंसा और अन्याय के मामलों में अपना दृष्टिकोण प्रकट करें और इस प्रकार शान्ति, अहिंसा और न्याय का मार्ग प्रशस्त करें।

(११) व्यक्ति जीवन के हर क्षेत्र में शान्ति, प्रेम, अहिंसा और उत्तम आचरण का आदर्श प्रस्तुत करें।

(१२) लोगों में ऐसी भावना भरी जाए कि वे अभावग्रस्त, दरिद्र और दलित वर्ग को सहायता, सहारा और समर्थन देने की दृढ़ प्रतिज्ञा करें तथा उनकी मौलिक आवश्यकतायें पूरी करने में उनको यथेष्ठ सहयोग दें।

(१३) बन्धुआ मजदूरों एवं इसी तरह की छिपी हुई प्रच्छन्न सामाजिक बुराइयों का व्यक्तिगत स्तर पर पर्दाफाश करें।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

(१४) नशीली दवाओं के सेवन एवं सुरापान को समूल नष्ट करें।

(१५) खाद्य-सामग्री के हर प्रकार के अपव्यय को रोकें तथा यह प्रयास करें कि इस प्रकार से बचाई गई भोजन सामग्री का उपयोग उपमानवीय पशुओं, पालतू प्राणियों एवं पक्षियों की यथेष्ट उदर-पूर्ति में किया जाए।

(१६) शाक-सब्जियों आदि की घरेलू उपज को प्रोत्साहित कर भोजन का शान्ति-स्टॉक तैयार करें।

(१७) फल-वृक्षों, औषधीय पौधों और जड़ी-बूटियों को घर-घर में उपजा कर स्वस्थ-जीवन का मार्ग प्रशस्त करें।

(१८) उत्साही व्यक्तियों को इस बात के लिए प्रेरित करना कि वे प्रतिदिन कम से कम एक पत्र देश व विदेश में लिखकर विश्व-समुदाय के देशों के बीच शान्ति-सम्पर्क और सद् भावना स्थापित करें।

(१९) सुलेख का उपयोग शान्ति पोस्टर्स को बढ़ावा देने की एक कला के रूप में करें।

(२०) वैयक्तिक जीवन में गणाधिपति श्री तुलसी द्वारा तैयार की गई अणुव्रत आचार संहिता का पालन करें।

६. राजनीतिक कार्य

शान्ति और अहिंसा के प्रचार और प्रसार में राजनीति को भी प्रभावशाली माध्यम मानकर तत्सम्बन्धी निम्नांकित कार्य संपादित किये जाए

(१) एक विश्व सरकार गठित करने में योगदान—वह सरकार जो विश्व के सभी क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करे तथा शान्ति के सम्बन्द्ध समस्त उपलब्ध संसाधनों और सामग्री का यथेष्ट उपयोग करे।

(२) आधिकारिक रूप से लोगों को पूर्णतया अहिंसावादी बनने के लिए प्रोत्साहन देना।

(३) बाल शान्ति संगठन (चिल्ड्रन्स पीस फाउन्डेशन) की स्थापना और इसके अन्तर्गत बच्चों का, विशेषतः विश्व नेताओं के बच्चों का, उन स्थानों के

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

लिए अन्तर्राष्ट्रीय आदान-प्रदान करना, जहां दो या अधिक देशों के बीच तनावपूर्ण स्थिति अधिक उग्र होती चली जा रही हो।

(४) मानव समाज के सभी वर्गों के समक्ष विश्व में हो रहे अन्यायों को उजागर करना।

(५) शान्ति और अहिंसा के मंच पर खड़े सभी उम्मीदवारों को सहारा एवं सहयोग देना।

(६) सैनिक सेवायें (सहारा) देने के बजाय नैतिक सहारा या समर्थन देने की उपयुक्त पृष्ठभूमि तैयार करना।

(७) विश्व शान्ति ब्रिगेड का गठन, प्रशिक्षण और विशेषतः उस क्षेत्र में यथेष्ट उपयोग जहां दो या अधिक देश संघर्षरत हों।

(८) अहिंसा और शान्ति के मंच से राजनीतिक प्रकियाओं का प्रयोग।

(९) गरीबों के उन राजनीतिक/ आर्थिक/ सामाजिक कारणों का विनम्रभाव से निराकरण करना जो हिंसा को जन्म देने वाले हैं।

(१०) विश्व के समस्त धार्मिक संगठनों के बीच समन्वय एवं विचार-विनिमय स्थापित करना, ताकि उनके द्वारा कोई हिंसात्मक कदम न उठाया जा सके।

(११) विश्व के पर्यावरण को प्रदूषण से बचाने के लिए स्थानीय सफल शान्ति आन्दोलनों को प्रोत्साहन।

७. न्यायिक

विश्व में अहिंसा और शान्ति का साम्राज्य स्थापित करने के लिए निम्नांकित न्यायिक प्रक्रियाओं का भी यथेष्ठ उपयोग किया जाए

(१) असैनिक असहयोग संघर्षों में भाग लेने हेतु उपलब्ध संवैधानिक प्रतिरक्षात्मक उपायों का पता लगाना और विश्व-नागरिकता की संकल्पना का उपयोग करना।

(२) मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा के परिप्रेक्ष्य में उचित तर्कों का लाभ लेते हुए किसी भी राजनीतिक संगठन में अपनी निष्ठा/ आस्था रखने के अधिकार का प्रतिपादन एवं उसकी रक्षा करना।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

घोषणा-पत्र प्रारूपण समिति :

गेरी डेविस (संयुक्तराज्य अमेरिका)

एस. एल. गांधी (भारत)

डॉ. सुमन खन्ना (भारत)

शर्ली ओ'के (संयुक्तराज्य अमेरिका)

अताउर-रहमान (बांगला देश)

मोनिका सिडेन्मार्क (स्वीडन)

प्रो. रामजी सिंह (भारत)

मूलरूप से शर्ली ओ'के द्वारा लिखित, विनोद सेठ एवं डॉ. जे. एन. पुरी द्वारा पुनर्लिखित।

अन्तिम सम्पादन — एस. एल. गांधी □

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

जैन विश्व भारती, लाडनूं (राज.)

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org